सबला

वर्ष 5 : अंक 4 सेवाग्राम विकास संस्थान, नई दिल्ली अक्तूबर-नवंबर, 1992

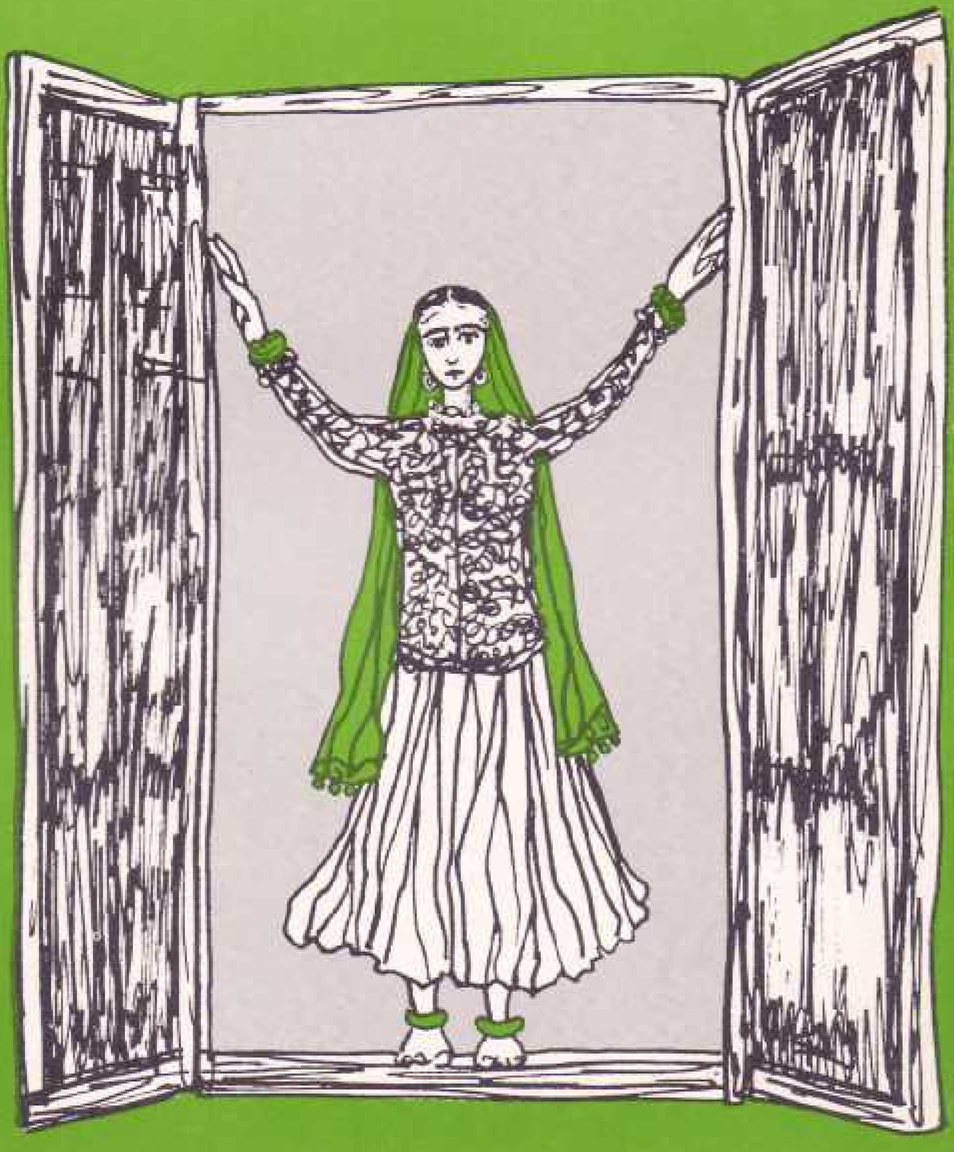

इस अंक में

हमारी बात	1
बन तू सबला —कृष्णा सिंह	2
एक साझी लड़ाई —वीणा शिवपुरी	3
क्या परिवार जिम्मेदारी निभा रहा है —रेणुका पामेचा	6
गलत धारणाएं छोड़ें —सुहास कुमार	9
सरकार करे अत्याचार —वीणा शिवपुरी	13
सामों होणों है —सुलताना राम जाखड़	14
कैसे मैं जुड़ूं बहनों से	15
जब मुर्गी बांग देती है —कोरियन कविता	17
शराब के खिलाफ महिलाओं का आंदोलन —कमला भसीन	18
त्यौहार गुड़ियों का —सुमन सिंह	21
महिलाओं की जागरूकता रंग लाई —गीता गैरोला	22
एक लक्ष्मी की पूजा, दूसरी का अपमान —रीता चतुर्वेदी	25
कुछ यहां की, कुछ वहां की	26
मेरी कहानी, हम सबकी कहानी —साभार: युवा साथिन	27
इनसे सावधान रहें	28
छींक! कैसे-कैसे मतलब —सुहास कुमार	29
शांति की कहानी —एक आपबीती	31
'सबला' के लेखों पर चर्चा —अनिता ठेनुआं	32
प्रेरकों ने लिखा है	34
पाठकों ने लिखा है	35

सहयोग मंडल

कमला भसीन
सुहास कुमार
वीणा शिवपुरी
ज्ञानेंद्र प्रसाद जैन
'जागोरी' समूह
प्रतिभा गुप्ता
बुलबुल शर्मा—चित्रांकन
सरोजनी—चित्रांकन व सज्जा

ग्रामीण बहनों की द्विमासिक पत्रिका—शिक्षा विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार तथा 'नोराड', नई दिल्ली द्वारा अनुदानप्रदत्त; डाक्टर शारदा जैन (सेवाग्राम विकास संस्थान, 1 दरियागंज, नई दिल्ली-110 002) द्वारा संपादित व प्रकाशित तथा इन्द्रप्रस्थ प्रैस (सी. बी. टी.), नेहरू हाउस, 4 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110 002 में मुद्रित।

हमारी बात

आज भंवरी साथिन का मामला हम सब के लिए एक अहम मुद्दा है। सिर्फ़ इसलिए ही नहीं कि यह एक औरत के साथ जघन्य अपराध है, बल्कि इसलिए भी कि इसके ज़रिए कुछ बड़े महत्वपूर्ण सवाल उठते हैं।

औरतों के लिए बहुचर्चित सरकारी योजनाएं या विकास की बात करने वाले बड़े-बड़े कार्यक्रमों को धरातल पर लागू करने वाली यही ग्रामीण कार्यकर्ता होती हैं। एक सामाजिक ढर्रे को चुनौती देने वाली इन औरतों को उसी गांव में, उसी समाज में रहना होता है।

हम इस बात से भी वाक़िफ़ हैं कि औरत की हिम्मत तोड़ने, उसे दबाने के लिए यौन अत्याचारों का इस्तेमाल किया जाता है। यानि गांवों और कस्बों में काम करने वाली ये कार्यकर्ता हर समय यौन अत्याचार के ख़तरे के नीचे काम करती हैं।

— क्या सरकार काम से जुड़े इन ख़तरों को स्वीकार करती है?

— क्या सरकार उनसे किसी सुरक्षा का वायदा करती है?

— ऐसी घटना होने पर क्या सरकार औरत को हरजाना और न्याय दिलवाने की जिम्मेदारी उठाती है?

भंवरी के मामले में सरकार ने अपनी ज़िम्मेदारी से मुंह चुराया है। यह हादसा सरकारी कार्यक्रमों से जुड़े कार्यकर्ताओं की हालत दर्शाता है। 'सबला' के इसी अंक में मध्य प्रदेश के सामाजिक कार्यकर्ताओं की कहानी स्वयंसेवी संस्थाओं की दमन कथा बयान करती है। एक तरफ पुलिस किस आसानी से लोगों को गिरफ्तार कर लेती है। दूसरी तरफ़ अपराधी आजादी से घूमते हैं।

आज जब हम अपने काम से जुड़े खतरों को समझ रहे हैं, पहचान रहे हैं तो सरकार से जवाबदेही मांगने की ज़रूरत भी समझ में आती है। क्या वोट देकर हमने उन्हें पांच साल के लिए मनमानी करने का लाइसेंस दे दिया है?

इस मुद्दे पर, चाहे मर्द हो या औरत, हमें एक सामूहिक आवाज़ उठानी है।

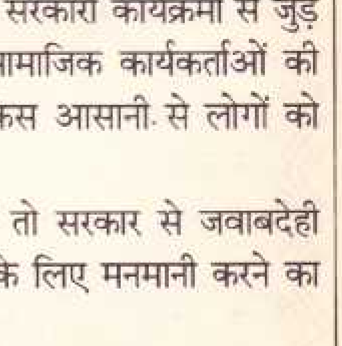

बन जा तू सबला

अबला नहीं, अब बन जा सबला
है तेरे हाथ में हुनर का जादू
बना रंगोली दीवार सजाती
साक्षर बन जीवन सजा ले

बन नहीं अन्याय, अंधविश्वास
अनाचार, अत्याचार का शिकार
केवल जननी, मां नहीं
है तेरा जीवन अपने में अर्थवान

बनकर आप सबल ही
संवार सकती है सबका जीवन
तोड़ गलत परंपराओं की कारा
फैला जग में नया उजियारा

कृष्णा सिंह

एक साझी लड़ाई

वीणा शिवपुरी

राजस्थान के भटेरी गांव में 22 सितंबर '92 को महिला विकास कार्यक्रम की साथिन भंवरी बाई के साथ उसी गांव के रामकरण गूजर के साथी बद्री और ग्यारसा गूजर ने बलात्कार किया। भंवरी का दोष यह था कि वह बाल-विवाह के खिलाफ़ चलाए गए सरकारी अभियान में जुटी हुई थी। उसने रामकरण गूजर को समझाया था कि अपनी एक साल की लड़की की शादी न करे। पूरा सरकारी तंत्र इस अभियान में शामिल था लेकिन बदला लिया सिर्फ भंवरी से।

क्योंकि—वह निम्न वर्ग की है।
—वह ग़रीब है।
—वह औरत है।

आज के श्रेणीबद्ध, पितृसत्तात्मक समाज में ये सभी चीजें कमज़ोर बनाती हैं, व्यक्ति के खिलाफ जाती हैं। यहां तक कि सरकार भी कमजोर का साथ नहीं देती। गांव के स्तर पर पुलिस ने इस अपराध की रपट लिखने में ढिलाई बरती। चूंकि भंवरी एक कार्यकर्ता है उसकी समझ और चेतना का स्तर ऊंचा था।

उसने तुरंत डाक्टरी जांच की मांग की। उन कपड़ों को भी सहेज कर रखा। लेकिन इसके बावजूद उसकी डाक्टरी जांच में देरी की गई। पुलिस, डाक्टर और हाकिम सभी की मिलीभगत से इस बलात्कार के सबूतों को नष्ट कर दिया गया। गांव में भंवरी के खिलाफ प्रचार किया गया कि बलात्कार कभी हुआ ही नहीं। भंवरी ने झूठी

कहानी गढ़ी है। यह तो जले पर नमक छिड़कने वाली बात हुई।

आज सारा गांव धनी गूजरों की तरफ़ है। भंवरी और उसके पति मोहन से कोई लेन-देन नहीं रखता। उनसे कोई बात नहीं करता। सिर्फ़ इसलिए कि भंवरी ने अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई है। वह और औरतों की तरह खून का घूंट पीकर चुप नहीं रही। उसने अपनी ही बेइज्जती की कहानी खुलेआम दोहराने का साहस किया है ताकि कभी तो इसका अंत हो। कभी तो तेल डाल के बैठी सरकार के कानों पर जूं रेंगे। कभी तो यह पितृसत्तात्मक व दबावपूर्ण समाज औरत के दर्द को पहचाने।

भंवरी अकेली नहीं है

सारे गांव ने चाहे भंवरी के साथ दगा की हो लेकिन सारे देश की औरतें भंवरी के साथ हैं। भंवरी के साथ हुए इस अन्याय की खबर फैलते ही चारों तरफ़ से उसके समर्थन में आवाज़ उठने लगीं।

सबसे पहले तो महिला विकास कार्यक्रम की साथिनों और बाकी कार्यकर्ताओं ने इस मुद्दे को उठाया। दिल्ली के महिला समूहों से संपर्क किया और फिर देश के अन्य सरकारी कार्यक्रमों की कार्यकर्ताओं को अपने से जोड़ा।

यह सवाल सिर्फ़ भंवरी का नहीं बल्कि उन लाखों औरतों का है जो समाज में बदलाव लाने के सरकारी और ग़ैर-सरकारी कार्यक्रमों से जुड़ी हुई हैं। अपने-अपने तरीके से बंधे बंधाए ढर्रे को चुनौती दे रही हैं।

एक ताक़तवर अभियान

एक महीने बाद तक वे अभियुक्त खुलेआम घूम रहे हैं। सरकार ने अब तक कोई कदम नहीं उठाया था। इसलिए 22 अक्तूबर के दिन सारे देश से औरतें जयपुर में एक विशाल प्रदर्शन करने के लिए इकट्ठा हुईं।

सुबह ठीक दस बजे बसें भर-भर कर औरतें राम निवास बाग पहुंचने लगीं। ये औरतें गुजरात से लेकर गढ़वाल तक से आई थीं। सबके हाथों में नारे लिखे पोस्टर और बैनर थे। सबके होठों पर जोश भरे शब्द थे सरकार के खिलाफ, अन्याय और बलात्कार के खिलाफ़।

— "भंवरी भटेरी को न्याय दो न्याय दो।"
— "अंधा कानून चौपट न्याय
बलात्कारी को सरकार बचाए।"
— "हम भारत की नारी हैं
फूल नहीं चिंगारी हैं।"

चारों तरफ़ एक समुद्र नज़र आता था। औरतों का समुद्र, जोश और उत्साह से थपेड़े लेता समुद्र। लगभग बारह सौ मज़बूत औरतें एक जुलूस की शक्ल में जयपुर के मुख्य रास्तों से

गुज़रीं। इसमें बूढ़ी, जवान और बच्चियां, पढ़ी-लिखी शहरी, पेशेवर और देहातन औरतें थीं। कई अपने नन्हे-नन्हे बच्चों को छाती से चिपकाए दोपहर की कड़ी धूप में चल रही थीं।

करीब आठ-नौ किलोमीटर पैदल चल कर यह जुलूस 'स्टेच्यू सर्कल' पहुंचा जहां एक आम सभा हुई। कुछ और औरतों ने भी अपने साथ हुई ऐसी घटनाओं को दोहराया। बलात्कारियों का साथ देने वाली ताकतों को धिक्कारा। भंवरी बाई ने सामने खड़ी पुलिस की तरफ़ उंगली उठा कर पूछा—"आज निहत्थी औरतों के सामने तुम बंदूके लेकर खड़े हो। जब मेरे साथ अन्याय हुआ था तब कहां थे तुम सब और तुम्हारी ये बंदूकें?"

एक अहम सवाल

भंवरी ने एक बड़ा अहम सवाल उठाया। पुलिस, न्यायालय, सरकार और इसका सारा तंत्र किसलिए है? क्या सिर्फ़ बेगुनाह और कमज़ोर नागरिकों को सताने के लिए या उनकी रक्षा के

लिए। एक आम आदमी को छोटा-मोटा सिपाही भी गिरफ्तार करने की ताक़त रखता है। हर रोज़ हज़ारों लोग गिरफ्तार किए जाते हैं। लाखों बिना मुक्दमे के जेलों में सड़ रहे हैं और आज बलात्कारी को गिरफ्तार करने की पुलिस में हिम्मत नहीं। सरकार के हाथ बंधे हुए हैं। नेताओं की सिट्टी-पिट्टी गुम है।

— तो क्यों बैठे हैं ये ऊंची कुर्सियों पर?
— क्यों दुहाई देते हैं जन-सेवा की?
— क्यों बात करते हैं न्याय की?

औरतों के शांतिपूर्ण जुलूस पर लाठी चलाने और कई पुरुष कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार करके गायब कर देने में तो इन्हें पल भर की देर न लगी। चुनाव के समय धूप-धूल की परवाह न करते हुए, गांव-गांव जाकर, हाथ जोड़ कर वोट मांगने वाले नेता उस दिन औरतों की बात सुनने के लिए अपने दफ्तर से चार कदम चल कर बाहर फाटक तक न आ सके। जबकि ये औरतें सैंकड़ों, हज़ारों मील का सफ़र कर अपनी जेब से पैसा खर्च कर वहां पहुंची थीं। 22 अक्तूबर के प्रदर्शन ने सरकार की दोमुंही चाल से पर्दा उठा दिया।

एक तरफ़ औरतों के विकास, उनके उत्थान की बात करने वाली यह सरकार मौका पड़ने पर औरतों पर अन्याय करने से नहीं चूकती।

हम चेत चुके हैं

भंवरी की लड़ाई हम सबकी लड़ाई है। और एक लम्बी लड़ाई है। एक प्रदर्शन इस लड़ाई की शुरुआत भले ही हो, अंत नहीं है। जब तक इस देश का कानून भंवरी को न्याय नहीं देता, जब तक सरकार यौन अत्याचार के खतरे को स्वीकार करके नीतिगत परिवर्तन नहीं लाती, यह संघर्ष जारी रहेगा। □

भंवरी के नाम

आज छोटी दिवाली है। मेरे बच्चे पटाखे के लिए पैसे मांग रहे हैं, दीया जोड़ने की बोल रहे हैं। मेरे मन में बार-बार भंवरी का ख्याल आ रहा है। अपने आपको गाली भी दे रही हूं। क्यों ना रुकी तू उसके घर जाने के लिए। क्यों ना दीया जोड़ा तूने भंवरी की दहलीज पर।

मेरी भंवरी पता नहीं कैसी होगी। मेरे आसपास घरों में दीये, मोमबत्ती की लौ रोशनी देती है। मेरे मन की बूंद-बूंद से भरा दीया है। गुस्से से बंटी मैंने बाती। मगर कब वह दिन आएगा जब यह दीया जलेगा। मैं दुआ मांगती हूं मेरी काली मां मेरी भंवरी को तू शक्ति देना।

शांति
(दक्षिणपुरी, दिल्ली)

क्या परिवार अपनी ज़िम्मेदारी निभा रहा है

रेणुका पामेचा

हमारे समाजशास्त्र में परिवार के महत्व और भूमिका की बहुत चर्चा है। परिवार में रहकर ही मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास होता है और वह एक सामाजिक प्राणी बनता है। परिवार व्यक्ति को विशेषकर स्त्रियों को सुरक्षा प्रदान करता है। सुरक्षा का एक दूसरा पहलू भी है जिसे अब उजागर करने का समय आ गया है।

व्यवहार में लड़की देखती है कि उसे सपने देखने का हक़ नहीं है। व्यवसाय चुनने व फैसला करने का हक़ नहीं है। वह देखती है कि—

1. माता-पिता मिलकर कन्या भ्रूण हत्या करते हैं।
2. बालिका-वध भी हो ही रहा है। बड़े गर्व से कहा जाता है, ''हमारा गांव ऐसा है जहां एक भी बारात नहीं आई।''
3. ऐसे भी परिवार हैं जो बच्चियों की जनगणना नहीं करवाते। यानी वे इंसान नहीं हैं।
4. परिवार में लड़के को सब सुख-सुविधाएं दी जाती हैं। सारी मेहनत लड़की से करवाई जाती है। शिक्षा, स्वास्थ्य व पोषण में लड़की की ओर लापरवाही परिवार के भीतर ही देखने में आती है।
5. बालिका के व्यक्तित्व के विकास, उसके अपने वजूद की तरफ परिवार का कोई ध्यान नहीं रहता। जल्दी से जल्दी उसका ब्याह करके बोझ उतारने की फिक्र मां-बाप को रहती है।
6. नन्हीं बालिका को नन्हीं मजदूर बनाकर शिक्षा व विकास के सारे रास्ते बंद कर दिए जाते हैं।

सोचने की बात यह है कि प्यार से, सुख-सुविधाओं से वंचित बालिका एक स्वस्थ, चिंतनशील महिला कैसे बन सकती है। समाज के आधे हिस्से को पीछे रखने से एक प्रगतिशील समाज नहीं बन सकता। अगर परिवार में लड़की पर ज़ुल्म ढाया जा रहा है तो इस बुराई को दूर करने का उपाय हमें तुरंत करना है।

ससुराल में लड़की

एक ब्याहता के रूप में लड़की को कम अपमान एवं उत्पीड़न नहीं सहना पड़ता है। उसको जो ताने सुनने पड़ते हैं उनमें से कुछ नीचे सुचीबद्ध किए

एक अहम सवाल ?

गए हैं—

1. कंगालों के घर से लड़की लाए। हमारे तो भाग्य ही फूट गए।
2. हमारे लड़के को तो हज़ारों अच्छे रिश्ते आ रहे थे। न जाने कैसे हम इनके जाल में फंस गए।
3. हमारे साथ धोखा हुआ है। मोटर और रंगीन टी.वी. का वादा किया था। बाद में मुकर गए।
4. हम तो सोच रहे थे भाई इंजीनियर है। खुद पिता की उम्र भर की कमाई है। अच्छा दहेज देंगे। ऐसे ही बिदा कर दिया।
5. तीज-त्यौहार पर मिठाई भी नहीं भेजते। हमारी तो मोहल्ले में नाक कट गई।
6. बहू के बच्चा हुआ। सास-ननद को साड़ी तक नहीं। अपनी लड़की को तो सारी ज़िंदगी देंगें। मौके पर भी सास को नहीं दिया।
7. कैसा घटिया सामान दिया है। अलमारी देनी थी तो गोदरेज की देते।
8. लड़की सुशील और पढ़ी लिखी है तो क्या इसकी पूजा करें। छोटे-छोटे लोगों के दहेज में इतना सामान आ जाता है कि घर बस जाता है।
9. इसको तो काम करना भी नहीं आता। मां-बाप ने कुछ सिखाया ही नहीं।
10. महारानी जब देखो बीमारी का बहाना बनाती है। काम नहीं होता तो अपने बाप से कहकर 2-4 नौकर और उनका खर्च क्यों नहीं मंगवा लेती।
11. महारानी जी को इतनी गर्मी लगती है तो फिर अपने बाप से कहकर ए.सी. लगवा ले।
12. बहू, तुम हमारा पीछा छोड़ दो। हमारे लड़के के तो हज़ारों रिश्ते आ जाएंगें।

इस तरह की हज़ारों चुभती हुई बातें तीर की तरह गहरा घाव करती हैं। लड़की घुटती है, परेशान होती है, इससे तकलीफ़ देने वाली बात यह है कि पति बहुत ही दब्बू किस्म के इंसान होते हैं। पत्नी के संबंध में आज्ञाकारी पुत्र होते हैं और पत्नी पर होने वाले हर जुल्म में पूरी तरह शामिल होते हैं।

किस विश्वास के सहारे हमने विवाह-संस्था को इतना महत्व दिया हुआ है कि लड़की की शादी करके ही माता-पिता अपनी मुक्ति समझते हैं। हर लड़की के मन में बिठा दिया जाता है कि ब्याह तो होना ही चाहिए और उसे हर हालत में ससुराल में समझौता करना चाहिए।

अगर हमें स्वस्थ समाज की रचना करनी है तो परिवार के ढांचे मे आई विसंगतियों की चर्चा ज़रूरी है। बेटियों को घुटने-मरने से बचाना है तो परिवार की भूमिका की चर्चा ज़रूरी है। परिवार के भीतर की हिंसा समाज व व्यवस्था की हिंसा से ज़्यादा ख़तरनाक है। □

घर से छुटकारा

अनुराधा गुप्ता

16-17 वर्ष की सुंदर, सुशील, डरी, सहमी लड़की ने हमें बताया कि उसके अपने परिवार के सदस्य (दादी, चाचा-चाची, पिता, बहन, नाना-नानी) उसके साथ बुरा सुलूक करते हैं। मारपीट, गाली गलौज, तानों की वजह से उसका अपने घर में रहना मुश्किल हो गया है। दादी के अपने चार बेटे थे। पहली पोती को उसने अपने पास रखा। लेकिन किशोरावस्था में प्रवेश करते ही दादी ने वापस मां-बाप के पास भेज दिया। मां-बाप भी उसे अपने पास नहीं रखना चाहते थे। थोड़ा पढ़े पिता बमुश्किल 6 जन का परिवार चलाते थे।

लड़की के काफी मिन्नत करने पर उसे घर में रख तो लिया गया पर महज़ एक नौकरानी की तरह। उससे छुटकारा पाने के लिए जल्दी ही एक अपाहिज (पोलियो से पीड़ित) धनी परिवार के लड़के से रिश्ता कर दिया। परंतु लड़की ने ब्याह से इंकार कर दिया। दूसरी बार एक बड़ी उम्र के व्यक्ति के साथ, जिसकी पहली पत्नी मर चुकी थी, रिश्ता तय किया। लड़की ने वहां भी शादी करने से इंकार कर दिया।

ताज्जुब की बात तो यह है कि इस पर उसके पिता ने कहा कि "तू घर से निकल जा। भले ही जी.बी. रोड जा, पेशा कर हमें कोई फर्क़ नहीं पड़ता है।" फिर भी वह सब परिणाम सोचकर घर ही में रहती रही। किंतु जब एक दिन उसकी छोटी बहन ने उस पर हाथ उठा दिया तो वह सह नहीं सकी और घर से निकल आई।

लड़की पढ़ी-लिखी, समझदार है। वह महिला संस्था के पास आई। लड़की नाबालिग है। हमें सोच समझकर कदम उठाना था। हम लोगों ने 8-10 दिन उसे अपने पास रखा। उसके घर फोन करके दादी व पिता को बुलाया। लड़की की दादी खुद ही मोहताज है। मां की एक साल पहले मृत्यु हो चुकी है। वे लोग उसे वापस ले जाने को तैयार थे। यह भी कहा कि उस पर अब कोई ज़ोर ज़ुल्म नहीं किया जाएगा। मगर लड़की ने वापस जाने से इंकार कर दिया।

अब वह और ज़्यादा पढ़-लिखकर कुछ बनकर दिखाने की कोशिश में है। एक दुखी व मजबूर महिला-संस्था के साथ रह रही है और नए सिरे से जीवन निर्माण कर रही है। ज़रा सोचें उसे किस कसूर की सज़ा दी जा रही है? □

बाड़ ही खेत को खाने लगे तो रक्षक कौन?

माता-पिता भी स्वार्थी हो सकते हैं यह बात आसानी से गले के नीचे नहीं उतरती। पर पैदा होते ही बेटी की हत्या, छोटी उम्र में उसकी शादी ताकि उनका बोझ व ज़िम्मेदारी खत्म हो। इसे क्या कहा जाएगा?

लेकिन एक मामला हमारे सामने ऐसा आया कि हमें लगता है कि हमारी सोच में भारी बदलाव की ज़रूरत है। इस परिवार में तीन बेटियां ही बेटियां हैं। अब अकेले बुढ़ापा काटने के डर से मां-बाप यही चाह रहे थे कि उनकी एक बेटी उनके साथ रहे। जवाई भी वहीं आ जाए। वे स्वयं बेटी के ससुराल में ऐसा माहौल बनाने में भागीदार हो गए ताकि बेटी ससुराल में न रह सके।

एक दिन तारा अपने माता-पिता के साथ हमारे कार्यालय में शिकायती पत्र लेकर आई कि वह पति के साथ नहीं रह सकती। वह मारता-पीटता है और उसकी सास उसे प्रोत्साहित करती है।

हमने तारा के पति अशोक को भी बुलाया। उसने आने से इंकार किया। फिर कुछ दिन बाद अशोक की बहन हमें मिली और उसने कहा कि हम समझौता करना चाहते हैं। अशोक की बहन, अशोक और तारा अपने माता-पिता के साथ हमारे पास आए। दोनों की बातचीत हुई। तारा तुरंत अशोक के साथ जाने को तैयार थी। पर हमें लगा उसके माता-पिता के घर से उसकी बिदा होनी चाहिए। तारा अपनी दोनों लड़कियों को लेकर अशोक के साथ ससुराल चली गई। □

ज़िला महिला विकास अभिकरण, डूंगरपुर

गलत धारणाएं छोड़ें नए रास्ते खोजें

सुहास कुमार

भारत और चीन दो ऐसे देश हैं जहां संसार के और देशों के मुकाबले जनसंख्या बहुत ज़्यादा है। दोनों ही न केवल कृषि प्रधान देश रहे हैं, दोनों की सामाजिक मान्यताएं भी मिलती जुलती रही हैं। दोनों में ही पुत्र का होना एक धार्मिक और सामाजिक ज़रूरत माना गया है। इस पुत्र-रत्न की ललक में कन्याओं की लाइनडोरी लग जाती है। जनसंख्या ज़्यादा होने के और भी अनेक कारण हैं पर यहां हम उनमें नहीं जाएंगे। हम देश की बढ़ती आबादी पर भी यहां बात नहीं करेंगे।

हमें देखना यह है कि बहुत बच्चे होने से एक परिवार की इकाई पर क्या असर पड़ता है। हरेक के साधन सीमित होते हैं। यह सीमा गरीब परिवारों में और भी ज़्यादा सिकुड़ी हुई होती है। जो कपड़ा दो बच्चों में बंटेगा और जो छह-सात या अधिक बच्चों में बंटेगा ज़ाहिर है कि बाद की स्थिति में बहुत कम हरेक के हिस्से में आएगा। यह बात सिर्फ खाने तक सीमित नहीं है। कपड़ा, शिक्षा, स्वास्थ्य की सुविधाएं आदि अनेक क्षेत्रों में यह लागू होती है।

मां पर असर

इन सब साधनों के ठीक से न मिलने की वजह से परिवार के सब सदस्यों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर इसका असर पड़ता है। सबसे बुरा असर मां के स्वास्थ्य पर पड़ता है। अगर छह बच्चे हुए तो लगभग 18 वर्ष मुख्य रूप से इसी प्रक्रिया में गुजर जाते हैं। ज़्यादातर बच्चों के बीच अंतर भी बहुत कम होता है। इससे मां के शरीर की ताक़त बहुत तेज़ी से खर्च होती है। इस समय में वह और कोई रोजगार का काम नहीं कर पाती है और जब करती भी है तो उसके शरीर पर बहुत बोझ पड़ता है। बच्चे भी कमज़ोर पैदा होते हैं।

यही नहीं, अनेक रोग भी लग जाते हैं। औरतों की ज़्यादातर बीमारियां माहवारी और प्रजनन अंगों से जुड़ी होती हैं। शरीर कमज़ोर होता है तो और भी अनेक रोग जल्दी पकड़ते हैं। तो सोचना यह है कि हमें ज़्यादा बच्चे पैदा करने से क्या फायदा और क्या नुकसान है। अगर नुकसान ज़्यादा और फायदे कम हैं तो हम क्यों परिवार को छोटा बनाने की कोशिश नहीं करते?

गलत धारणाएं छोड़ें

इस संबंध में कुछ गलत धारणाएं और मान्यताएं हैं जिन्हें मन से निकालना ज़रूरी है।

1. "बच्चे भगवान की देन हैं। हमारे बस की बात नहीं है।" अब परिवार नियोजन के अनेक तरीके हमें उपलब्ध हैं, अतः यह कहना गलत है।
2. "पुत्र ही हमारे बुढ़ापे का सहारा बन सकता है।" पुत्री भी उतनी ही सहारा बन सकती है अगर आपने शुरू से उसे पुत्र समान पाला है

एक पुत्र की आस में
ढेर पुत्रियां चार!

और विकास के पूरे अवसर दिए हैं।

3. ''अगर पुत्र नहीं है तो हमारी चिता को आग कौन लगाएगा? हमारे लिए स्वर्ग का रास्ता बंद हो जाता है।'' स्वर्ग या नरक हमारे कर्मों का फल है। उन्हें तो भोगना ही होगा, चाहे इस जन्म में या अगले जन्म में।
4. ''पुत्र से वंश का नाम चलता है।'' नाम पुत्र से नहीं व्यक्ति के गुणों और योग्यताओं के कारण चलता है। हम सब आज गांधी जी को याद करते हैं उनके वंशधरों को नहीं। क्या आपको उनके पुत्रों के नाम मालूम हैं?
5. ''बच्चा न होने में अथवा लड़कियों के पैदा होने की ज़िम्मेदार औरत है।'' यह गुण-सूत्रों का खेल है। बच्चा न होने का कारण स्त्री या पुरुष दोनों ही हो सकते हैं। पुत्र न होना पुरुष के गुण-सूत्रों पर निर्भर करता है।
6. ''बच्चा या पुत्र-रत्न की प्राप्ति व्रत-उपवास रखने, साधू-संतों से गंडा तावीज़ लेने से होती है।'' साधू-संतों के पास जाने से आप बलात्कार एवं यौन-हिंसा की शिकार हो सकती हैं।
7. ''धर्म और शास्त्र के सब क़ानून आपको आंखे बंद कर के मानना है।'' यह कहीं आकाश से लिखकर नहीं आए हैं। समय और अपनी समझ से इनमें बदलाव लाया जा सकता है।
8. ''माहवारी के दौरान औरत गंदी हो जाती है।'' यह कुदरत की देन है। इसी से औरत बच्चा जन पाती है। जो सृष्टि को चलाने की क्रिया है वह गंदी कैसे हो गई। माहवारी के दौरान औरत को अछूत बनाकर रखना गलत है।
9. ''परिवार नियोजन की जिम्मेदारी सिर्फ़ औरत की है।'' यह सच है कि परिवार नियोजन के 95 फीसदी तरीके औरतों के लिए बनाए गए हैं। सच्चाई यह है कि पुरुषों का प्रजनन तंत्र सीधा और सरल है। मगर तरीके की खोज करने वाले पुरुष हैं। फिर भी परिवार नियोजन की ज़िम्मेदारी पुरुषों की भी उतनी ही है जितनी स्त्रियों की।
10. ''बच्चों में से कुछ तो मरेंगे भी।'' यह तभी होता है जब ज़्यादा बच्चे होते हैं। कई बार वे कमज़ोर पैदा होते हैं। कई बार सही देखभाल न होने की वजह से उनकी मौत हो जाती है। कम बच्चे स्वस्थ रहेंगे और उनके मरने की संभावना बहुत कम हो जाती है।
11. ''बच्चे हम पर बोझ नहीं बनते। वे तो छोटी उम्र से ही कमाने लगते हैं।'' यह सही हो सकता है पर क्या यह बच्चों पर अत्याचार नहीं है? आप उनके खेलने-कूदने, पढ़ने-लिखने, हुनर सीखने के दिनों में उन पर काम का बोझ लाद देते हैं। उससे उनका विकास रुक जाता है।
12. ''भगवान ने औरतों को आदमियों के लिए ही बनाया है। उनका काम पति, बच्चों और परिवार की देखभाल करना और बच्चे पैदा करना है।'' औरत भी पुरुष की तरह एक इंसान है। स्वस्थ और सम्मानित जीवन जीने का उसे भी उतना ही अधिकार है। उसको बचा-खुचा भोजन मिले और बीमार पड़ने पर सही देखभाल न हो यह बहुत गलत बात है।
13. ''जिंदगी में सही फैसले सिर्फ़ मर्द ही कर सकते हैं।'' औरत को भी भगवान ने दिमाग दिया है। लेकिन उसके विकास और इस्तेमाल करने पर समाज ने रोक लगा रखी है।

सोच बदलें

अक्सर औरतें कहती हैं—"अरे, औरत की जिंदगी भी क्या कोई जिंदगी है।" या "हम औरतें किसी काम लायक नहीं हैं।" "अगर हमारा आदमी हमें पीटता है तो गलती हमारी है।" यह सब एक बहुत गलत सोच का नतीजा है। अगर हम अपने जीवन से असंतुष्ट हैं तो हमें उसमें बदलाव लाने की कोशिश करनी चाहिए। दुख और परेशानी चुपचाप सहते नहीं जाना चाहिए।

हमें यह समझना होगा कि मनुष्य का सबसे बड़ा हथियार उसका दिमाग है। उसका इस्तेमाल हमें सबसे पहले अपनी गलत सोच को बदलने के लिए करना है। हमें खुले आसमान की खुली हवा में सांस लेना सीखना होगा। लीक से हट कर नए रास्ते बनाने होंगे।

इंसान की तरह जीने का हक़ रूढ़िवादी सोच और गलत परंपराओं को छोड़कर ही हासिल किया जा सकता है। आगे का रास्ता बहुत साफ़ न भी समझ में आए तो भी आगे बढ़ते जाना होगा। यह सड़े गले संस्कार धीरे-धीरे ही जाएंगें। शायद बदलाव में कई पीढ़ियां लग जाएं। पर यह आकर ही रहेगा, अगर हम अपने अंदर "क्रांति-सूर्य" उदय करें। □

कुछ बुनियादी बातें

अक्सर देखने में आता है घर में स्त्री और बच्चों के स्वास्थ्य की ठीक से देखभाल नहीं होती है। नीचे कुछ जानकारी दी जा रही है जो उन्हें स्वस्थ रहने में मदद करेगी।

1. बच्चा जनने में औरत की बहुत सी ताक़त और समय जाता है। सही भोजन व आराम न मिलने और बच्चों के बीच कम अंतर होने से उसकी सेहत खराब होती है।
2. ध्यान रहे 20 साल की उम्र से पहले और 35 साल की उम्र के बाद बच्चा पैदा न करें। बच्चों के बीच में कम से कम 3 साल का अंतर होना चाहिए।
3. बच्चा पैदा होने के पहले और बाद में भी जच्चा की ठीक से देख-भाल ज़रूरी है। गर्भवती मां के टिटेनस का टीका लगना ज़रूरी है।
4. बच्चा होने के तुरंत बाद ही मां उसे स्तनपान करा सकती है। मां के स्तनों से दूध उतरने के पहले एक तरल पदार्थ 'कोलेस्ट्रम' निकलता है जो बच्चे के स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी है। इससे बच्चे के पेट की जमा गंदगी साफ होती है। बच्चे को बीमारियों से बचने की प्रतिरक्षण शक्ति मिलती है। इस प्रक्रिया से मां का दूध उतरने में भी आसानी होती है। जब तक मां के दूध नहीं उतरता बच्चे के लिए 'कोलेस्ट्रम' ही पर्याप्त भोजन भी है। उसे और कुछ भी पिलाने की ज़रूरत नहीं है।
5. चार महीने तक बच्चे के लिए मां का दूध काफ़ी है। चार से छह महीने के बीच उसे साथ में मसली हुई सब्जी और फल देने चाहिए। छह महीने के बाद थोड़ा-थोड़ा अन्न भी देना चाहिए।
6. बच्चों की मौत दस्तों से नहीं होती बल्कि शरीर में पानी की कमी से होती है। इसलिए यदि दस्त आ रहे हों तो काफ़ी मात्रा में पानी और तरल पदार्थ देना ज़रूरी है। पानी में नमक व चीनी मिलाकर देने से बहुत फ़ायदा होता है।
7. बच्चों को जल्दी ही टीके लगवाने चाहिए। उसके लिए डाक्टरी या स्वास्थ्य कार्यकर्ता की मदद लें। □

सरकार करे अत्याचार

वीणा शिवपुरी

★ *पटवारी ने घूस मांगी। कार्यकर्ता ने इनकार कर दिया। उसे पकड़ कर मारा-पीटा, उसका सिर फोड़ दिया। नक्सलवादी होने का आरोप लगा कर जेल में ठूंस दिया।*

★ *गांव के पास चराई के लिए ज़मीन थी। तहसीलदार, पटवारी मिल-बांट कर खा जाना चाहते थे। सामाजिक कार्यकर्ताओं ने लोगों को संगठित किया। मंत्रियों, अफसरों को चिट्ठियां लिखी। उनके साथ मार-पीट की गई। 22 दिन तक जेल में बंद कर दिया गया। इसमें लड़के-लड़कियां दोनों शामिल थे।*

★ *एक गांव के थानेदार ने औरत कार्यकर्ता को पकड़ कर थाने में बिठाए रखा, गालियां दी, धमकियां दी। फिर कहा गांव छोड़ कर भाग जाओ। दोबारा नज़र आई तो नहीं बचोगी।*

★ *आदिवासी लड़की के साथ साहुकारों ने बलात्कार किया। कार्यकर्ताओं ने आंदोलन चलाया। पुलिस ने शांत जुलूस पर हमला कर मारा-पीटा, गिरफ्तार कर लिया। स्त्री कार्यकर्ता को चरित्रहीन बताया। बदनामी की। धमकी भरी चिट्ठियां भेजीं। यहां तक कि जान से मारने की धमकी दी।*

ये सारी घटनाएं किसी जंगल में नहीं हुईं। किसी ऐसे प्रदेश में नहीं हुई जहां कोई कानून न हो। बल्कि स्वतंत्र लोकतांत्रिक भारत के एक राज्य मध्य प्रदेश में हुई। जहां लोगों की चुनी हुई सरकार है। जहां पुलिस है, कानून है, न्यायालय हैं।

यहां ध्यान देने की बात यह है कि बेगुनाह लोगों पर क़हर ढाने वाले लोग वही हैं जिनका काम लोगों को बचाना है। जो कानून के रखवाले हैं, वही कानून से खेल रहे हैं। जनता की वोटों से मंत्री बन जनता की सेवा करने वाले नेता भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे हैं। जनता को कुचल रहे हैं।

स्वार्थी वर्ग की साजिश

इस सबके पीछे कारण है शासक और धनी वर्ग का स्वार्थ। जिनके पास बहुत अधिक है वे और चाहते हैं। उनके लालच की भूख सुरसा के मुंह की तरह बढ़ती ही जाती है। चाहे इसके लिए आम गरीब आदमी के हक़ मारने पड़ें। उसके मुंह से रोटी का टुकड़ा छीनना पड़े।

ये आम गरीब आदमी जो बहुसंख्यक हैं थोड़े से लोगों के शोषण का शिकार हैं।

जन चेतना की कोशिश

मध्य प्रदेश के कई संगठनों ने मिल कर अपने आपको एकता परिषद के झण्डे तले एकजुट किया है। गरीब बहुसंख्यकों का शोषण तभी रुक सकता है जब उनमें चेतना जागे। जब वे अपने हक़ों के लिए लड़ना सीखें। यही सपना है एकता परिषद का। इसके कार्यकर्ता अपनी इज्ज़त, यहां तक कि

अपनी जान खतरे में डाल कर ये काम कर रहे हैं। ज़ाहिर है कि वे शासक और धनी वर्ग की आंखों में खटकते हैं। अफसोस यह है कि सरकार भी इस चंडाल चौकड़ी का हिस्सा है।

सरकार का रवैया है कि सामाजिक चेतना को कुचल दो। पुलिस सरकारी पिट्ठू के रूप में कार्यकर्ताओं को हर तरह से प्रताड़ित कर रही है। कानून का नाज़ायज फ़ायदा उठा कर झूठे इलजामों में गिरफ्तार कर रही है। औरतों को बेइज्ज़त करने की धमकी दे कर डरा रही है।

एक महिला कार्यकर्ता ने बताया—"मुझे पकड़ा, गाली दी, मारा-पीटा। फिर कहा अगर दोबारा यहां आई तो आंखों में मिर्ची भर देंगे। नंगा करके बेइज्जती करेंगे।"

नक्सलवादी बता कर आम आदमियों को हर तरह से सताया जा रहा है। दक्षिण बस्तर के एक कार्यकर्ता ने बताया कि जब सच में नक्सलवादी आए तो पुलिस भाग गई। बाद में बोले हम मरना थोड़े ही चाहते हैं। अपनी इस नाकामी को ढकने के लिए किसी को भी पकड़ कर नक्सलवादी बता देते हैं।

जलता हुआ सवाल

आज हम सब के मन में यह सवाल उठता है कि जिन्हें हमने चुना है, जिनके हाथ में हमने ताक़त दी है आज वही अत्याचारी बन बैठे हैं तो क्या हमें चुप बैठना चाहिए?

चूंकि हम ईंट का बदला पत्थर से नहीं देना चाहते। हिंसा के बदले बड़ी हिंसा में विश्वास नहीं करते। हमारे लिए एक ही रास्ता है कि और जोश से साथ जन चेतना में जुट जाएं। आपसी संपर्क, बातचीत, अख़बार और पत्रिकाओं के ज़रिए इस मिली-भगत का भंडाफोड़ करें। हम सब अपनी पूरी ताक़त से कार्यकर्ताओं के साथ होने वाले इस अत्याचार का विरोध करेंगे। □

सामों होणों है

बहणों दबकर कोनी रहणों है,
दुरगा को थे रूप बणाल्यो,
सामों होणों है
सामों होणों है, थानै खुद नै लड़णों है

भंवरी बाई गांव भटेरी, काम करै है चोखो
बाल-विवाह और अनाचार नै, कहण लगी थे रोको
गांव में साथिन रो यो कहणों है।
22 सितम्बर की घटना सुण, दिल सै को थर्राग्यो
बलात्कार भंवरी के सागै, दिन-दहाड़े होग्यो
अब यो जुलम कतह नां सहणों है।
रोई बिलखी घणी बिचारी, कौण सुणै सच्चाई
प्रचेता बहनां सूं मिलकै, थाणै रपट लिखाई
भंवरी नै सांचो न्याय दिलाणों है।
राज-पुलिस सब चेतो करल्यो, दोषी बच नहीं पावै
ऐसी सजा मिलै बानै कोई, दूजौ सिर न उठावै
नारी शक्ति रो कै कहणों है।
हर नारी में मांकी मूरत, दिल अपणै में झांको
बहण-बेट्यां री इज्जत लुटरी, जीणू है अब क्यांको
राज कै सगला देद्यो धरणों है।
गांव का सब भाई-बहणों, अब भी चेतो करल्यो
सबक सिखाद्यो जुलम्यां नै, परमेश्वर रूप धरल्यो
सब नै सांचो फर्ज़ निभाणों है।

सुलताना राम जाखड़

समय-समय पर जब भी हमने धरातल पर काम करने वाली कार्यकर्ताओं से बातचीत की है यह सवाल बार-बार उभरा है। यह बात सही है कि अपने आसपास के लोगों से जुड़ने और उन्हें अपने आपसे जोड़ने के लिए कुछ गुणों की ज़रूरत होती है। जैसे **एक सहानुभूतिपूर्ण नज़रिया, लोगों की समस्याओं के प्रति समझ और एक भावनापूर्ण मन**। ये वो बुनियादी चीजे हैं जो किसी भी ग्रामीण कार्यकर्ता के व्यक्तित्व का हिस्सा होनी ही चाहिए। लेकिन यहां हम कुछ तकनीकों की बात करेंगे जो सीखी और सिखाई जा सकती हैं। हमारा अनुभव है कि उनके ज़रिए दीवारें तोड़ने और नज़दीक आने में मदद मिलती है।

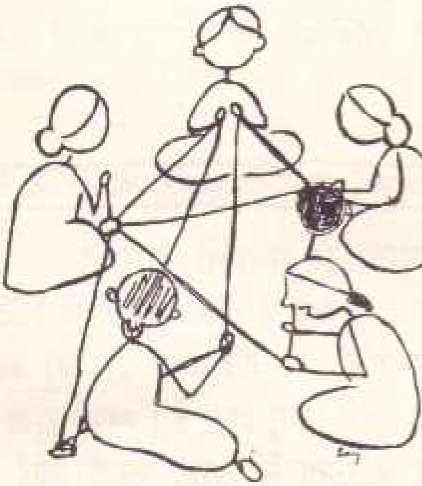

व्यक्तिगत ही राजनीतिक है

औरत के जीवन से जुड़े किसी भी मुद्दे की बात करें, चाहे वह दहेज-हत्या हो या घरेलू मारपीट, परिवार में लड़की का दर्जा हो या पिता की संपत्ति में बेटी का हक़, यह एक बड़ी बात लगती है। एक राजनीतिक मुद्दा लगता है। वास्तव में यह है भी बड़ी बात क्योंकि इसके पीछे एक इतिहास है, एक सामाजिक व्यवस्था है। इसकी लड़ाई भी बहुत लंबी और कठिन है।

जब हम ऐसे मुद्दों से बहनों को जोड़ना चाहते हैं तो सबसे अच्छा तरीका है किसी एक औरत की जिंदगी से शुरू कर के राजनीतिक की तरफ बढ़ना। पितृसत्तात्मक व्यवस्था, आर्थिक शोषण जैसे शब्द शायद उन्हें पराए लगें। उसमें उनकी रुचि जगाना कठिन होगा। लेकिन अगर उनसे अपने और उनके जीवन की बात की जाए तो यही मुद्दे बड़ी आसानी से समझ में आ जाएंगे। पितृसत्ता उन्हें खुद उनके आंगन में दिखने लगेगी। उनका आर्थिक शोषण सुबह से शाम तक की कमर तोड़ मेहनत करने में दिखाई देगा।

कैसे मैं जुड़ूं बहनों से?

अध्यापिका न बनें

ग्राम-स्तरीय कार्यकर्ताओं को ध्यान रखना चाहिए कि उनकी बातचीत, बैठने की जगह आदि से कहीं ऊंचेपन का अहसास न हो। हर बहन अपने आपको उस बैठक का महत्वपूर्ण हिस्सा समझे। जहां कहीं कार्यकर्ताओं और बाकी बहनों के बीच ऊंच-नीच का संबंध बनता है वहीं दीवारे खड़ी हो जाती हैं।

अपने अनुभव बांटें

यह तो हमने जान लिया कि व्यक्तिगत से राजनीतिक की ओर बढ़ना चाहिए। लेकिन इस व्यक्तिगत मिल-बांट में कार्यकर्ता की भी बराबर भागीदारी होनी चाहिए। जब भी हम औरत के जीवन के संघर्षों की बात करते हैं तो पहले खुद अपने संघर्षों की बात करें। तभी वह डरी, शंकित

बहन खुल पाएगी। हमारा अनुभव है कि अपने आपसी जीवन को बांटने से लोग बहुत करीब आ जाते हैं। साझे दुखों से बढ़ कर कोई गोंद नहीं।

सहभागितापूर्ण बैठक

हर बैठक में ध्यान रखना चाहिए कि सभी बहनों की बराबर हिस्सेदारी हो। ऐसा न हो कि आप ही बोलती जाएं। या फिर दो-चार आत्म-विश्वासी बहनें दूसरों को बोलने का मौका ही न दें। जब तक हर बहन की सहभागिता नहीं होगी वह दोबारा वहां नहीं आना चाहेगी। जहां बहनों को अपनी ज़रूरत, अपनी हिस्सेदारी, अपनी काबलियत का अहसास होगा वहीं वे बार-बार आना चाहेंगी। यह मानव स्वभाव है।

खेलों का महत्व

ज़्यादातर संदर्भ व्यक्ति बताते हैं कि उनकी कार्यशालाओं में खेले जाने वाले खेल बड़े काम के होते हैं। सबसे पहले जब अजनबी औरतें मिलती हैं तो उनकी झिझक तोड़ने के लिए ऐसे खेल खेले जाते हैं जिनमें एक दूसरे को छूना, सबके नाम याद करना या फिर कुछ और हंसी मज़ाक होता है।

कुछ समय बाद अपनी सामाजिक स्थिति के बारे में सवाल उठाने वाले खेल खेले जा सकते हैं। ऐसे खेल जो उन्हें कुछ सोचने पर मजबूर करें।

औरतों के स्वास्थ्य, उनके सुख-दुख से जुड़े खेल भी होते हैं। इन खेलों के ज़रिए औरतों के मन की तहों के नीचे दबी भावनाएं बाहर आती हैं। ऐसी बातें जो शायद उन्होंने अपने अलावा किसी और को न बताई हों।

इस तरह से बढ़ता है आपसी विश्वास। एक दूसरे पर भरोसा बढ़ाने वाले खेल खेले जा सकते हैं।

गीतों से मनाओ रंगरेली

शायद सारी दुनिया में गीत औरतों की जिंदगी का अहम हिस्सा हैं। ये बात हमारे देश की औरतों पर तो सोलह आने लागू होती है। अपने सुख-दुख की हर बात वे गीतों में प्रकट करती आई हैं। औरतों की कोई भी बैठक बगैर गीतों के तो पूरी हो ही नहीं सकती। जो बात बड़े-बड़े भाषणों में नहीं कह सकते वो गीत की दो लाइनों में कही जा सकती है। पूरे नारी आंदोलन के इतिहास में औरतों के गीतों की अहम भूमिका रही है। बहनों को अपने नए गीत रचने के लिए भी उत्साहित करें।

इसी तरह की अपनी नई-नई तकनीकें भी ढूंढें और उन्हें दूसरों के साथ बांटें। □

याद में

वह अमुक की पुत्री थी, अमुक की बहन थी
अमुक की पत्नी थी, अमुक की मां थी
यही उसका परिचय था, यही उसकी पहचान
इन्हीं रिश्तों की परिभाषाओं के दायरे में
जीकर वह बिदा हुई एक दिन संसार से
बहुत ढूंढा मगर उसका नामोनिशा न मिला
सबने कहा नाम में क्या है?
वह एक अच्छी पुत्री, पत्नी और मां थी
हर भूमिका उसने बखूबी निभाई थी
पूछा-क्या वह सुखी थी, जवाब मिला
इससे बढ़कर सुख और संतोष क्या हो सकता है?
सुहागिन मरी और पति के घर से अर्थी उठी।

सुहास कुमार

मुहावरे और कहावतें भी एक खिड़की हैं समाज को समझने की। उदाहरण के रूप में औरतों के बारे में जो कहावतें हैं उनसे भी अंदाजा लगता है कि समाज में औरत का क्या दर्ज़ा है। उसे कैसे उठना-बैठना और कैसे व्यवहार करना चाहिए। औरतों या लड़कियों के बारे में जो भारतीय कहावतें एकदम याद आती हैं वो हैं—

"औरत मर्द के पैर की जूती है।"

"बेटी को पालना पड़ौसी के पेड़ को पानी देने के समान है।"

"बेटे वाले तर गए, बेटियों वाले मर गए।"

"ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी ये सब ताड़न के अधिकारी।"

अन्य देशों में भी ऐसी कहावतें हैं। अभी हाल ही में मैं दक्षिण कोरिया की महिला मजदूरों के संगठन के बारे में पढ़ रही थी। बहुत हिम्मत वाली महिला मजदूरों का यह संगठन मज़दूर और अन्य औरतों की शिक्षा का भी काम करता है।

इस संगठन ने एक कविता छापी है जिसका शीर्षक है "जब मुर्गी बांग देती है"। यह शीर्षक एक कोरियन कहावत से लिया है—"जब मुर्गी बांग देगी घर बरबाद होगा।" यानि बांग देना, बोलना सिर्फ़ मुर्गों या मर्दों को शोभा देता है। अगर मुर्गियां या औरतें बांग देंगीं, बोलेंगी तो अशुभ होगा, घर बरबाद होंगे। **इस कहावत को इस कविता में बड़ी खूबसूरती से बदला है। औरत बोलेगी तो कुछ बदलेगा, कुछ शुभ होगा, कुछ नया रचा जाएगा।**

मुझे कविता अच्छी लगी तो अनुवाद कर 'सबला' के पाठकों तक पहुंचाने का निश्चय किया।

जब मुर्गी बांग देती है

कमला भसीन

यहां, औरतें हैं आसमान सी
यहां, औरतें हैं सूर्य सी
यहां औरतें हैं प्रभात सी
वो रचती हैं जीवन
वो रचती हैं इतिहास
वो रचती हैं भविष्य
औरतों का रचा
जीवन इतिहास,
भविष्य हमारी
आस है।

हम आस करते आए हैं
एक मानवीय जीवन मानवीय भविष्य की
यह आस हमारे साथ रही है
उन सभी संघर्षों, वेदनाओं और
रचनाओं के लंबे दौर में
जिनसे दलित बहनें, मांएं
मांओं की मांएं जूझती आई हैं
ना जाने कब से हम सहती रही हैं
बेहूदा कहावतें
"जब मुर्गी बांग देगी तो घर बरबाद होगा"
किस किस के खिलाफ़ लड़े हैं हम?
अब हम बिना झिझक
अपनी आवाज़ उठा रहे हैं
हम कसम खाते हैं औरतों की
जो भविष्य की जननी हैं
और कहते हैं
"जब मुर्गी बांग देती है
एक अंडे का जन्म होता है"

शराब के खिलाफ़ सबलाओं का आंदोलन

कमला भसीन

हैदराबाद से ठीक सौ किलोमीटर दूर मेडक ज़िले का छोटा-सा शहर ज़हीराबाद औरतों की आवाजों से गूंज रहा था। लगभग डेढ़ हज़ार गरीब औरतें एक लंबे जुलूस में शामिल थीं। उनके सफ़ेद बैनर पर लिखा थाः वेलुगू—मेडक ज़िला महिला संघ। वेलुगू का मतलब है रोशनी। साठ गांवों से पैदल या बसों से आई ये नाराज़ औरतें शराब के खिलाफ़ ज़ोर-ज़ोर से नारे लगा रही थीं।

सारा (शराब) नहीं चाहिए
पानी चाहिए
सारा नहीं चाहिए
शिक्षा चाहिए
नशा नहीं चाहिए
खुशी चाहिए

ज़हीराबाद शहर ने शायद पहली बार औरतों का इतना बड़ा जुलूस देखा था। इस ज़िले में काम कर रही एक स्वयंसेवी संस्था—डैकन डवेलपमेंट सोसाइटी ने इस जुलूस में थोड़ी मदद की थी लेकिन जुलूस निकालने की योजना गांव की औरतों की ही थी। ये सारी मज़दूर या किसान औरतें अपना काम, दिहाड़ी, घर छोड़ कर शराब पर हमला बोलने इसलिए निकलीं थीं क्योंकि शराब ने इन सब की जिंदगी हराम कर रखी है। ये औरतें सरकार से शराबबंदी की मांग कर रही थीं और साथ ही साथ अपने मर्दों को भी यह संदेश दे रही थीं कि उनकी शराबखोरी औरतें और नहीं सहेंगी। शराब के हाथों वो अपने जीवन को खत्म नहीं होने देंगी।

इस तरह के जुलूस और बैठकें पिछले तीन महीनों से आंध्र प्रदेश के सैकड़ों गांवों और शहरों में आयोजित किए गए हैं। कुछ ही महीनों में एक बड़ा आंदोलन खड़ा हो गया है। यह आंदोलन किसी नेता या पार्टी ने नहीं चलाया। आम औरतों ने इसे चलाया और आगे बढ़ाया है। हां, अब ज़रूर राजनैतिक दल और नेता इस आंदोलन से जुड़ रहे हैं। इस आंदोलन में स्वयंसेवी संस्थाएं जुड़ी हुई हैं। चित्तूर ज़िले की बहुत सारी संस्थाएं इस आंदोलन में मदद कर रही हैं। ये विकास संस्थाएं जानती हैं कि जब तक गरीबों का करोड़ों रुपया शराब में जाएगा, उनकी तरक्की नहीं हो सकती।

कमरतोड़ गरीबी

शराब के खिलाफ़ इस आंदोलन के कई कारण हैं। सबसे बड़ा कारण है कमरतोड़ गरीबी। औरतों का कहना है कि पिछले कुछ महीनों में मंहगाई

और बढ़ी है। राशन मंहगा हो गया है, राशन की मात्रा कम हो गई है। खुले बाज़ार में चावल के दाम बढ़ गए हैं। शराब की भी कीमतें बढ़ी हैं। इस मंहगाई में मर्दों का शराब पर खर्च करने का मतलब है परिवार का भूखों मरना।

औरतों पर होने वाली हिंसा भी पिछले वर्षों में बढ़ी है। हालांकि औरतों पर हिंसा सिर्फ़ शराबी ही नहीं करते, फिर भी शराबखोरी हिंसा को ज़रूर बढ़ावा देती है। शराब पी कर मर्द अपने बच्चों और अपनी पत्नी को अधिक मारते हैं।

एक औरत ने हमें बताया कि हैदराबाद शहर में 25 रुपये दिहाड़ी कमाने वाला एक मज़दूर दिन में 10-12 रुपये की शराब पी जाता है और 5-6 रुपये नमकीन या दो चार कबाब पर खर्च करता है। यानि दिन की कमाई का 75 फी सदी शराब पर लग जाता है। घर, परिवार के लिए कुछ बचता नहीं है। अधिकतर घर औरतों को चलाने पड़ते हैं। इधर-उधर जो काम मिल जाए, चाहे जितनी कम मज़दूरी पर मिले, वह करके औरतें अपने बच्चों, अपने शराबी पति और अपना पेट पालने पर मजबूर होती हैं। शराब पी कर जब

मर्द घर लौटता है तो उसे खासी भूख लगी होती है। घर पर पूरा खाना होता नहीं है। तो बस वह बरसता है अपनी बीवी और बच्चों पर। लाखों घरों में रोज़ यही कुछ होता है।

साक्षरता से शुरुआत

इस सब से तंग आ कर ही आंध्र प्रदेश की औरतें सड़कों पर निकली हैं। कहते हैं इस आंदोलन की शुरुआत आंध्र प्रदेश में चल रहे एक साक्षरता अभियान से हुई। साक्षरता की किताब में शराब के नुकसानों पर एक पाठ था जिसे पढ़कर औरतों में गुस्सा जागा। चूंकि साक्षरता अभियान के जरिए उनका संगम या समूह भी बन गया था उन्हें लगा कि अब वो अकेली नहीं है। सब मिलकर वो ज़रूर कुछ कर सकती हैं। नैलोर ज़िले में सबसे पहले औरतों ने शराब के खिलाफ़ जंग छेड़ी। जगह-जगह औरतों ने शराब के ठेकों और ठेकेदारों पर हमले किए। कई जगह उन्होंने अरक में आग लगाई। जिन जीपों में अरक भर कर जा रहा था, उन्हें रोका।

कई जगह औरतों के समूहों ने अरक की नीलामी नहीं होने दी। अफसरों को छुप कर नीलामी करनी पड़ी। औरतों के डर के मारे तेलंगाना ज़िले में पुलिस थाने में शराब बेची गई। लगभग 200 गांवों में अरक की बिक्री बंद हो गई है। जिन गांवों में अरक नहीं बिकती वहां शराबखोरी कम हो जाती है।

शराब के ठेकेदारों को संरक्षण देने वाले पुलिस अफ़सरों और कर अधिकारियों के खिलाफ़ भी कुछ समूहों ने प्रदर्शन किए। वैमपेन्ता नामक गांव में औरतों ने पांच शराबियों के बाल मूंड़े। तिरुपति में 300 औरतों ने अपने पतियों को अम्बेदकर साहब की मूर्ती के सामने शराब न पीने की क़सम खाने को मज़बूर किया। यानि यह आंदोलन आग की तरह फैला है।

लड़ाई गरीबों की

सरकार, शराब के ठेकेदार और उनके साथ मिले पुलिस और दूसरे अफ़सर बौखलाए हुए हैं। आंध्र प्रदेश सरकार शराब की बिक्री पर लगे टैक्स से साल में 850 करोड़ रुपये कमाती है। शराब बेचने वाले रोज़ाना दो करोड़ रुपये कमाते हैं। यानि दिन में 20-25 करोड़ रुपये की शराब बिकती है। शराब के धंधे में कितनी धांधलियां हैं इसका अंदाज लगाना मुश्किल नहीं है। इस धंधे से फ़ायदा उठाने वालों की ताक़त भी बहुत है और पहुंच भी।

आंध्र प्रदेश की सबलाओं की हिम्मत की दाद देनी पड़ेगी जिन्होंने इतने बड़े दुश्मन को ललकारा है। उन्होंने पूरे समाज को ललकारा है, शराब पर एक बार फिर से सोचने को। क्या हमारे देश का गरीब तबका शराब के नशे में झूलता रहेगा? क्या उसकी सारी कमाई शराब में बहेगी? क्या उनकी पूरी शक्ति यूं ही गंवाई जाएगी? क्या यह गरीब तबके को खामोश, बहका हुआ रखने की साजिश नहीं है? इस तबके को आज लड़ना चाहिए— गरीबी के खिलाफ़, मुनाफाखोरी के खिलाफ़, भ्रष्टाचार और अत्याचार के खिलाफ़।

आंध्र प्रदेश की गरीब, अनपढ़ लेकिन विदुषी औरतें न्याय मांग रही हैं। भूख, गरीबी, मारपीट से छुटकारा मांग रही हैं। लेकिन उनके नेता खामोश हैं, अपनी सत्ता के नशे में चूर हैं। उनके अपने घर के मर्द भी बहके हुए हैं या खामोश हैं। कैसी उलझी और मुश्किल लड़ाई है। यह लड़ाई एक तरह से पितृसत्ता के खिलाफ़ भी है। आंध्र प्रदेश की लाखों औरतें अपने मर्दों को भी ललकार रही हैं, इन्हें भी कह रही हैं बाज़ आने को, बुज़दिली छोड़ने को, शराब से अपने ग़म ग़लत करने की जगह अपनी समस्याओं का मुकाबला करने को।

औरतों का यह आंदोलन इस बात का भी सबूत है कि सामाजिक और आर्थिक बुराइयों को रोकने में वही लोग आगे आएंगे जिन पर इनका असर जानलेवा होता है। चूंकि शराब की मार (आर्थिक और शारीरिक दोनों) औरतों पर सब से ज़्यादा पड़ती है, वे अपनी पूरी ताक़त से शराब के खिलाफ़ लड़ रही हैं। जो लोग इस आंदोलन का साथ दे रहे हैं या देंगे वे ही समाज का हित चाहते हैं। जो इसके खिलाफ़ हैं या खामोश हैं वे गरीबी, शोषण, औरतों और बच्चों के दर्द को बढ़ावा दे रहे हैं। आज हर क्षेत्र में इस तरह के आंदोलन की ज़रूरत है। पैसे वालों की ताक़त के सामने यह आंदोलन अगर हारता है तो न्याय, हक़ और सच्चाई की हार होगी। □

त्यौहार गुड़ियों का

सुमन सिंह

औरतों के निचले दर्जे की छाप हमारे रीति-रिवाजों और कई त्यौहारों में साफ दिखाई देती है। ऐसा ही है एक त्यौहार गुड़ियों का। आज जब हम औरत को पुरुष के बराबर का दर्जा दिलाने की लड़ाई लड़ रही हैं तो क्या ऐसे त्यौहार और रीति-रिवाज आंखें मूंद कर मनाने चाहिए? नहीं। इन पर और सभी संबंधित मुद्दों पर खुल कर चर्चा करने की ज़रूरत है।

संपादिका

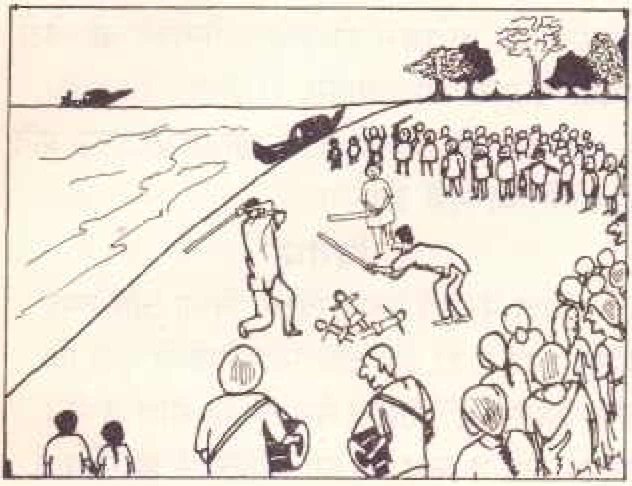

उत्तरी भारत के कुछ भागों में 'नागपंचमी' त्यौहार मनाने का एक अजीब तरीका है। उस दिन विवाहित और अविवाहित औरतें कपड़ों की गुड़ियां बनाती हैं। फिर उन्हें एक टोकरी में रख कर नदी या तालाब के किनारे ले जाया जाता है। त्यौहार में लड़के और पुरुष भी भाग लेते हैं। उनकी भूमिका यह रहती है कि वे उन गुड़ियों को लकड़ी की डंडी से खूब पीटते हैं। फिर स्त्री-पुरुष दोनों स्नान कर वापस आ जाते हैं।

देखने में त्यौहार मनोरंजनपूर्ण लगता है। लेकिन यह बात साफ़ ज़ाहिर है कि इसके ज़रिए पुरुषों द्वारा स्त्रियों की पिटाई को धार्मिक और सामाजिक मान्यता दी गई है। इसकी जड़ में स्त्रियों को नीचा दिखाने एवं अपमानित करने की भावना है। इसमें स्त्रियों की भी बराबर की भागीदारी है। गुड़ियां वही बनाती हैं और पुरुषों को देती हैं कि इन्हें पीटो।

यह त्यौहार शहरों में अब कम ही मनाया जाता है। लेकिन कई पिछड़े हिस्सों में जहां अशिक्षा और अज्ञानता है यह अभी भी उत्साह से मनाया जाता है। यह उन तमाम त्यौहारों में से एक है जिसकी जड़ में लड़की और लड़के का भेदभाव होता है।

करवा-चौथ में स्त्रियां व्रत रखकर पति की लंबी उम्र की कामना करती हैं। रक्षा बंधन, होली, दिवाली के बाद दुइज पर भाई को राखी एवं टीका किया जाता है। इसके पीछे भावना यह रहती है कि लड़की कमज़ोर है, उसे भाइयों का सहारा चाहिए। पुत्र का महत्व मानने के लिए दिवाली के पहले अष्टमी के दिन 'अहोई' त्यौहार मनाया जाता है। इसे वही स्त्रियां मना सकती हैं जिन्हें पुत्र-रत्न प्राप्त है। यहां तक कि पूजा-घर में जहां इसकी पूजा की जाती है, परिवार की लड़कियों को भीतर आने की अथवा बाहर से देखने की भी मनाही है। केवल पुत्रों की मांएं इस पूरी क्रिया में भाग लेती हैं।

इस त्यौहार से साफ ज़ाहिर है कि स्त्री का मान सम्मान इसी में है कि वह पुत्र की मां बने। इसीलिए स्त्रियां भी पुत्र की ही कामना करती हैं। हमारे यहां पुत्र-रत्न की प्राप्ति के लिए 1002 के करीब व्रत-उपवास हैं। □

महिलाओं की जागरूकता रंग लाई

गीता गैरोला

सरकार द्वारा करोड़ों रुपया महिलाओं के लिए विकास योजना के नाम पर दिया जाता है। यह कोई छिपी बात नहीं है कि वास्तव में कितना हिस्सा ज़रूरतमंदों तक पहुंचता है या सही रूप में खर्च होता है। ज़्यादातर लोगों ने इसे वर्तमान ढांचे का हिस्सा मानकर हालात के साथ समझौता कर लिया है। इस या किसी भी भृष्टाचार के खिलाफ़ कोई ठोस कदम जनता की ओर से उठता दिखता भी नहीं है। ऐसे में हिमाचल के भिलंगना क्षेत्र के श्रीकोट गांव की महिलाओं की अपने हक़ों की लड़ाई की जितनी भी तारीफ़ की जाए कम है।

ट्राइसेम योजना के तहत राजेन्द्र पैन्यूली ने जनवरी '92 में श्रीकोट गांव में एक बुनाई-सिलाई केंद्र खोला। इसमें 35 महिलाओं ने प्रशिक्षण लिया। वहां केवल एक बुनाई मशीन और चार सिलाई मशीन थीं। इस केंद्र में कई धांधलेबाजी की गई।

15 महिलाओं से फार्म भरवाकर प्रत्येक से 110 रु. लिए।

न तो उन्हें सामग्री दी गई, न 60 रु. जो योजना के तहत उन्हें मिलने चाहिए थे मिले।

हर सीखने वाली महिला को 600 रु. मिलने चाहिए थे। उन्हें चार महीने के प्रशिक्षण के बाद केवल 400 रु. दिए गए और टिकट पर साइन भी कराए।

एक महिला लक्ष्मी विष्ट के जाली दस्तख़त किए गए। उसने प्रशिक्षण लिया ही नहीं था, केवल नाम लिखाया था। उसे रुपए भी नहीं मिले।

400 रु. बांटने के बाद जब महिलाएं बाहर आ रहीं थी तो चार महिलाओं से मुन्नी, सुमित्रा, विजया और सरोजनी से राजेन्द्र पैन्यूली की बेटी ममता ने सब रुपए वापस ले लिए।

सिखाने की सामग्री या निर्धारित 60 रु. प्रति शिक्षार्थी भी नहीं दिए गए।

विरोध

सुमित्रा ने उसी समय विरोध किया और रुपए बांटने आए ए.डी.ओ. ज्ञान सिंह नेगी से पूछा कि रुपए किसके हैं? राजेन्द्र पैन्यूली भी साथ में थे। उन्होंने नेगी से कहा कि इस महिला ने हमसे कर्ज़ लिया था, वह वापस लिए हैं।

बाद में महिला मंगल दल की बैठक में इन चारों महिलाओं ने बात उठाई। अनामिका देवी, जो महिला सामाख्या की सखी भी हैं और राजेन्द्र पैन्यूली की पत्नी भी, ने कहा कि यह रुपए मशीनों की टूट-फूट के हैं और इन्हें वापस नहीं किया जाएगा।

10 जून को महिला सामाख्या के कार्यालय में सहयोगिनी बैठक में लक्ष्मी ने गांव की समस्या रखी। 11 जून को लगभग 10 महिलाएं धनशाली ब्लॉक कार्यालय में गईं। वहां अधिकारी नहीं मिले मगर एक जूनियर अधिकारी से बी.डी.ओ. के नाम पत्र ले लिया।

बाद में महिलाओं की बैठक हुई। अनामिका भी वहां थीं। उन्होंने कहा कि मशीनों की मरम्मत के बाद जो पैसा बचेगा लौटा दिया जाएगा। बैठक में महिलाओं ने कुछ सामूहिक फैसले लिए।

1. अनामिका देवी महिला सामाख्या में सखी-पद पर काम नहीं कर सकतीं क्योंकि उन्होंने महिलाओं को उनके हकों के बारे में जागरूक करने के बजाए उनके शोषण में भागीदारी निबाही।
2. एक पत्र सभी महिलाओं की ओर से खंड विकास अधिकारी को लिखा गया। जिसकी प्रतिलिपि डी.एम., ए.डी.एम., महिला सामाख्या कार्यालय तथा ब्लॉक प्रमुख को भेजी गई।
3. योजना की पूरी जानकारी उन्हें दी गई।

(क) बुनाई केन्द्र में एक मशीन पर सिर्फ 3 महिलाएं सीख सकती हैं।

(ख) प्रशिक्षण का पंजीकरण उद्योग विभाग द्वारा होना चाहिए।

(ग) प्रत्येक सीखने वाली महिला को 150 रु. प्रति माह 'स्टाइपेंड' मिलता है।

(घ) सिखाने वाली महिला को प्रति शिक्षार्थी 50 रु. मिलते हैं।

(ङ) सिखाने की सामग्री या 60 रु. हर शिक्षार्थी को मिलने चाहिए।

(च) सीखने के बाद यदि कोई महिला सिलाई मशीन के लिए कर्ज़ा लेना चाहती है तो वह उसे मिल सकता है।

बैठक से वापसी में शाम को बी.डी.ओ. के दफ्तर गए। वह वहां नहीं थे मगर ज्ञान सिंह नेगी से मिलना हुआ। उन्होंने यह बात मानी कि 200 रु. महिलाओं को कम दिए गए हैं। वह उन्हें दिए जाएंगे। राजेन्द्र पैन्यूली से भी चारों महिलाओं के रुपए वापस दिलवाएंगे। उनका कहना है कि राजेन्द्र पैन्यूली ने उन्हें फुसलाया। अब देखना है कि ए.डी.ओ. नेगी अपनी बात कहां तक निभाते हैं। महिलाएं आगे की लड़ाई के लिए तैयार हैं।

हठ लड़के का और लड़की का

एक था सेठ, मोटा व्यापारी। उसके थे एक बेटा और एक बेटी। सेठ ने बेटे के लिए सोने की लुटिया बनवा दी और बेटी के लिए सोने की चेन। सेठ के पास एक हाथी और मैना भी थे।

एक दिन बेटा हठ कर बैठा कि हाथी को लुटिया में रखो। सेठ ने प्यार से समझाया पर वह कहां बात सुनने वाला था। बेटी थी समझदार। भला, इतना बड़ा हाथी छोटी सी लुटिया में कैसे समा सकता है। बोली, ''बाबा, मुझे मैना दे दो।'' पिता ने लड़िया कर पूछा, ''बेटी मैना का क्या करेगी?''

''बाबा पिंजड़ा खोलकर उसे उड़ाउंगी। वह मीठा-मीठा गाना गाएगी।''

सेठ—''पर मैना तो उड़ जाएगी।''

बेटी—''मैं भी तो मैना के साथ उड़ूंगी।''

सेठ ने गंभीर होकर बेटी को गोदी से उतार दिया और नौकरानी को आदेश दिया—''बेटी को गढ़ी के भीतर ही रखा करो।'' बेटी ताज्जुब में कि उसने कौन-सी अनहोनी बात कह दी।

इसके बाद सेठ ने महावत को बुलाकर कहा, ''इस नालायक हठीले को ले जाओ। इलाके की सैर करा दो। दोनों का हठ नहीं मानना है।''

कुछ सवाल

1. बेटे और बेटी की सज़ा में क्या फ़र्क है?
2. यह भेदभाव कहां से शुरू होकर कहां खत्म होता है? यह सही है या गलत?
3. इसका असर कहां तक उनकी जिंदगियों पर होता है? □

जय मा लक्ष्मी

एक लक्ष्मी की पूजा, दूसरी का अपमान

रीता चतुर्वेदी

''यत्र नारी पूज्यंते, रमंति तत्र देवता।'' जहां स्त्री की पूजा होती है वहां देवता वास करते हैं। यह शास्त्रों में कहा गया है पर क्या कोई ऐसा युग हुआ है जब इसे व्यवहार में उतारा गया हो?

हर साल दीवाली आती है। दीप जलते हैं। लक्ष्मी-पूजन भी होता है। पर घर की लक्ष्मी का...!

मेरी एक सहेली है दीपशिखा। सारा दिन घर के कामकाज में लगी रहती है। रात को जब बिस्तर पर पड़ती है तो रोम-रोम दुख रहा होता है। बदले में क्या मिलता है—डांट-फटकार, झिड़कियां, ताने-उलाहने।

दीवाली के दिन पूरा घर दीयों से सजाया गया। दीपशिखा ने लक्ष्मी पूजन की पूरी तैयारी की। बदकिस्मती से उसके हाथ से पूजा संबंधी कोई चीज़ गिर कर टूट गई। सारे घर के लोग उस पर बरस पड़े—''देखकर नहीं चला जाता। कर दिया न अपशगुन।'' दीपशिखा अपमानित सी, आंसू पीकर एक ओर बैठ गई। लक्ष्मी पूजन हुआ। उसकी ओर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया।

आखिर क्यों होता है ऐसा? जो लक्ष्मी परिवार के लिए जीती है, कुरबान होती है वह ज़रा भी सम्मान की पात्र नहीं है।

× × ×

रघुवीर जी एक अच्छे पद पर कार्यरत हैं और महिलाओं के हित की हमेशा बात करते हैं।

अभी दीवाली की ही बात है। पहले तो उन्होंने काफ़ी जमकर शराब पी। फिर दोस्तों के साथ जुआ खेलने बैठ गए। लगभग 3 हजार रुपये हार गए। घर जाकर पत्नी को जगाकर सोने की चूड़ियां मांगने लगे। जब उसने देने से इंकार किया तो खूब गाली-गलौज देकर मार-पिटाई की। बेचारी पत्नी रात भर आंसू बहाती रही। ऐसा बीता उसका दीवाली का त्यौहार।

क्या हो गया है हमारे पुरुष वर्ग को? दीपावली पर सिर्फ घर ही नहीं, मन को भी रोशन करिए। घर की लक्ष्मी का निरादर करने से क्या कोई घर सुखमय बन सकता है? □

कुछ यहां की, कुछ वहां की

खजूरी गांव की महिलाएं अब चेत गई हैं। ग्राम विकास समिति के तहत् वे गृह उद्योग प्रशिक्षण ले रही हैं। उनमें से एक गंगाबाई भी है। एक दिन गंगा का पति केवा वहां आया और उसने सभी औरतों के साथ गाली गलौज की। वह शराब के नशे में था। गंगा को घर ले जाकर काफी मारा-पीटा भी।

महिलाओं ने पुरुषों से कहा कि वे केवा को इसकी सज़ा दें। मगर उन लोगों ने बात को गंभीरता से नहीं लिया। कहा कि शराब के नशे में कोई भी ऐसा कर सकता है। हां, महिलाएं उसे सज़ा देना चाहें तो दे सकती हैं।

महिलाओं ने प्रशिक्षण स्थल पर एक बैठक की। उसमें फैसला किया गया कि केवा को पकड़कर उसे जूतों की माला पहना, गधे पर बिठाकर, उसका मुंह काला करके सारे गांव में घुमाया जाए। उन्होंने सब तैयारी भी कर ली। इसके पहले कि इसकी नौबत आती केवा ने हाथ

जोड़कर, पैरों पर गिर कर माफ़ी मांग ली और कहा कि भविष्य में वह अपनी पत्नी को नहीं पीटेगा। महिलाओं के काम में मदद करेगा।

उससे एक लिखित इक़रार पत्र भी लिया गया। सज़ा के तौर पर केवा ने 5 किलो गुड़ लाकर उपस्थित लोगों में बांटा। महिलाओं ने यह भी घोषणा की कि जो कोई अपनी पत्नी को मारे-पीटेगा उसको भी केवा के लिए घोषित की गई सज़ा दी जाएगी। घटना मई 1992 की है।

श्री बंसीलाल गर्ग
खजूरी, उदयपुर (राज.)

एक ऐतिहासिक फ़ैसला

बात लंदन की है लेकिन मामला एक भारतीय महिला का है। किरन आलूवालिया 10 वर्ष तक पति द्वारा मारपीट, शारीरिक उत्पीड़न सहती रही। उसने बलात्कार और मार डालने की धमकी भी सही। आखिर एक दिन तंग आकर जब पति दीपक गहरी नींद में था उसने पेट्रोल छिड़ककर उसे जला कर मार डाला। 1989 में उसे अदालत ने आजीवन कारावास की सज़ा दी।

एक महिला संगठन ने इस मामले को उठाया। लेकिन बचाव पक्ष के वकील ने इस बात को मानने से इंकार कर दिया कि उसने उत्तेजित होकर पति की हत्या की थी।

तीन महीने पहले इस मामले को फिर उठाया गया और उस पर विचार हुआ। किरन घोर निराशा और तनाव की स्थिति से गुज़र रही थी। अदालत ने इसे माना और 24 सितंबर '92 को उसे बाइज्जत बरी कर दिया। अब वहां इस बात के लिए आंदोलन चल रहा है कि कानून में बदलाव लाया जाए। बरसों की हिंसा सहने की सीमा कभी तो खत्म करनी होगी? इसलिए उत्तेजना की अवस्था की कानूनी परिभाषा पर फिर से विचार करना ज़रूरी है।

× × ×

मनोरमा तमिलनाडू राज्य के पुदुकोट्टई जिले में रहती है। पहले वह खेतिहर मज़दूर थी और 6 रु. रोज कमाती थी। अब नगीने का काम करके 30 रु. रोज़ कमाती है। यह कैसे हुआ ?

उसके घर के पास साक्षरता केंद्र खुला। पढ़ना-लिखना सीखने के साथ उसकी दूसरी औरतों से पहचान हुई। बातों बातों में एक सरकारी योजना के बारे में पता लगा। अगर 20 औरतें मिलकर समूह बनाएं तो उन्हें 15000 रु. मिलते हैं और काम भी सिखाया जाता है।

यहां इन लोगों ने नगीनों को चमकाना और पॉलिश करना सीखा। बैंक से रुपया उधार लिया और अपनी मशीनें खरीदीं। पढ़ने-लिखने की जानकारी से हिसाब और बैंक आदि के काम में आसानी रही। इस जिले में 2 हज़ार नवसाक्षर बहनें नगीने का काम कर रही हैं। बैंक का कर्ज़ा भी चुका रही हैं। □

× × ×

मध्य प्रदेश के 35 धार जिले में एक गांव है पीठगढ़ा। इस गांव की पंचायत में 13 सदस्य हैं। सभी सदस्य औरतें हैं।

मध्य प्रदेश के मंदसौर ज़िले में पार्वती नाम की एक औरत ट्रक चलाती है। पिछले 15 साल में पार्वती ने करीब 5 लाख किलोमीटर ट्रक चलाई है।

मेरी कहानी हम सबकी कहानी

मेरा नाम कौशल्या है। मेरी उम्र लगभग 35-36 साल है। मेरे दो बेटियां और एक बेटा है। शादी को 17-18 साल बीत गए हैं। बड़ी लड़की 15 साल की है। मेरा पति बहुत शराब पीता है। सास-ससुर के मरने के बाद सारी ज़मीन-जायदाद बेचकर शराब में उड़ा दी। मेरे गहने और घर का तमाम सामान उसकी एय्याशी पर बलि चढ़ गया। मैं थोड़ा बहुत कमाकर पेट पालती हूं। वह थोड़ा बहुत कमाता है तो उसकी चंडाल-चौकड़ी उसका पीछा नहीं छोड़ती। कई-कई दिन तक जुआ खेलता रहता है, घर नहीं आता।

एक दिन हाथ में जब दारू की बोतल लिए झूमता घर में घुसा तो मैंने कहा कि "लड़की 15 साल की हो गई है, उसकी शादी की तुझे कोई चिंता नहीं है।" जुआ मंडली में उसने यह बात छेड़ी। दोस्त तो खुशी से खिल पड़े। अगले दिन ही मेरे पति रामधन को चंडाल चौकड़ी का सरदार शहर ले गया। उसे खूब शराब पिलाई। 2000 रु. की थैली मेज़ पर रखकर बोला—देख यार मैं तेरा भाई हूं। जैसी तेरी बेटी वैसी मेरी बेटी। गरीबों की लड़कियों की तो ऐसी ही शादी होती है। मैं सारा मामला पटा आया हूं। वर की उम्र कुछ ज़्यादा है तो क्या हुआ।

रामधन ने घर आकर बताया कि बेटी का रिश्ता पक्का कर आया हूं। चौथे दिन बरात आने वाली है। मैंने कुछ और पूछना चाहा पर वह तो घर से गायब हो गया। मुझे लगा दाल में कुछ काला है। सारी बात का पता लगाया। बहुत रोना आया। रो-धोकर जब लगा कि उससे क्या होगा तो जिंदगी में पहली बार पति के खिलाफ़ आवाज़ उठाने की ठानी।

पंचायत से अपील

मैंने पंचायत में सारी बात बताई। रामधन के चालचलन से सब जानकारी रखते थे। उन्होंने कहा हम तेरी मदद करेंगे। रोती तड़पती मैं गांव के महिला-मंडल में भी अपनी फरियाद लेकर पहुंची। मेरी कहानी सुनकर उन्होंने फौरन बैठक बुलाई और आश्वासन दिया कि शादी के दिन हम पंचायत के साथ मिलकर पूरा इंतजाम करके रखेंगे। तुम घबराओ मत।

शादी में एक दिन रह गया। रामधन अपनी मंडली के साथ बैठा शराब पीता रहा। महिला मंडल की औरतों ने 15 साल की नाबालिग बच्ची की शादी के खिलाफ़ रपट लिखवा दी। बरात आने वाले दिन पुलिस का इंतजाम भी कर रखा था। जब लोगों ने बरात में आए 70 साल के बूढ़े दूल्हे को देखा तो हैरान रह गए।

रामधन ने कहा कि और लोग बीच में टांग अड़ाने वाले कौन होते हैं। लेकिन पुलिस इंसपेक्टर ने आगे बढ़कर फौरन दूल्हे को पहचान लिया। उसने पहले भी इसी तरह कई नाबालिग लड़कियों से पैसे के बल पर शादी करके उनकी जिंदगी बर्बाद की थी। उस बूढ़े दूल्हे, रामधन और उसकी मंडली को पुलिस हथकड़ियां लगाकर ले गई। महिला मंडल की औरतों ने भी दूल्हे के गले में जूतों का हार पहना दिया ताकि उसे कुछ तो शर्म आए। □

साभार—'युवा साथिन', सूत्र

इनसे सावधान रहें
समाधि वाले बाबा

श्री-श्री 1008 जी की सिद्धि का चमत्कारिक प्रदर्शन। समाधि स्थल पर सत्संग चल रहा था। आसपास के गांव के लोगों का तांता लगा हुआ था। पूजा भेंट का काफ़ी अंबार लग गया था। बात अभी हाल ही की है। बाबा एक हफ्ते की भूमिगत समाधि में लीन थे।

दरअसल यह कोई सच्ची साधना नहीं थी। यह पैसा कमाने का एक तरीका है।

समाधि के पीछे रहस्य

5 घनफुट हवा हमें एक घंटा जिंदा रख सकती है। अगर 512 घनफुट का गड्ढा खोदा जाए तो उसके अंदर की हवा हमें लगभग 100 घंटे सांस लेने के लिए काफ़ी है। जितने दिन की समाधि लगानी हो उसी अनुपात में गड्ढा खोदा जाता है।

भोजन पानी का इंतज़ाम

चूंकि कोई कामकाज तो करना नहीं होता खाने-पीने की ज़रूरत नहीं पड़ती। 4-5 दिन न खाने से आदमी मरता नहीं है। समाधि लगाने वालों को भूखे रहने का अभ्यास होता है। रही पानी की बात तो सुराही या लोटे में पानी रख भी लेते हैं। सर्दी बरसात के मौसम में इसकी ज़रूरत भी कम होती है। समाधि में जाने के पहले व्यक्ति को अनीमा लेना पड़ता है ताकि टट्टी न जाना पड़े।

यही सब है समाधि के चमत्कार के पीछे रहस्य। इसका भांडा आसानी से फोड़ा जा सकता है।

साभार—हरियाणा साइंस बुलेटिन

भूत उतारने के बहाने बलात्कार

भूतबाधा दूर करने के बहाने एक तांत्रिक और उसके दो साथियों ने नवविवाहिता से बलात्कार कर लिया। तीनों व्यक्ति उसके घर से जेवर तथा नकदी लेकर फरार हो गए। यह वारदात गाजियाबाद (उ.प्र.) के पास गांव अकबरपुर-बहरामपुर में हुई।

पुलिस सूत्रों के अनुसार बच्चू सिंह (22 वर्ष) की शादी कुछ अर्से पहले 19 वर्षीय एक महिला से हुई थी। शादी के बाद से ही उसकी पत्नी रात में उठकर चल देती थी। उसके मित्र ने उसे बताया कि एक तांत्रिक को वह जानता है जो भूत-प्रेत बाधा दूर करता है। बच्चू सिंह की सहमति मिल जाने पर सुखदेव सिंह उस तांत्रिक और उसके एक शिष्य को लेकर आ गया।

तांत्रिक व उसके एक चेले और सुखदेव ने शराब मंगा कर पी तथा मुर्गा खाया। उसने पूजा पाठ शुरू किया। बच्चू सिंह का एक रिश्तेदार रामभूल भी वहां अचानक आ गया। तांत्रिक अपने साथ एक बर्तन में चरणामृत लाया था। उसने बच्चू सिंह तथा रामभूल को पीने के लिए चरणामृत दिया। उसे पीते ही दोनों बेहोश हो गए। रात भर उस महिला से बलात्कार करने के बाद सुखदेव सिंह, वह तांत्रिक तथा उसका साथी सुबह होने से पहले गायब हो गए।

नवभारत टाइम्स

पवित्र भभूति के पीछे रहस्य

महीन पिसे चावल के आटे को कंडे की राख के साथ मिलाकर बहुत छोटी-छोटी गोली बना ली जाती हैं। जब उंगली और अंगूठे के बीच इन्हें मसल देते हैं तो यह भभूति बन जाती है। □

छींक! कैसे-कैसे मतलब

सुहास कुमार

कंपकंपी, जम्हाई, हिचकी, डकार आदि की तरह छींक भी शरीर की स्वाभाविक प्रक्रिया है। मगर छींक को हमारे यहां ही नहीं दुनिया भर के देशों में एक अलग ही महत्व और मान्यता दी गई है। यह शायद इसलिए है कि छींक नाक से आती है और नाक से ही हम सांस लेते हैं। सांस का आना-जाना जिंदगी से जुड़ा है।

अशुभ की निशानी

जब भी छींक आती है तो इससे जुड़े अंधविश्वास के कारण हमारे मन में खटका पैदा हो जाता है। कहीं कुछ अशुभ तो नहीं होने वाला है। अंधविश्वास मन में इतने गहरे पैठ जाते हैं कि आसानी से इनसे छुटकारा पाना मुश्किल है।

अभी दो साल पहले की बात है। मेरी संहेली भारती की दादी ने उसे छींक आने के कारण 5 मिनट घर से बाहर जाने से रोक दिया। नतीजा यह हुआ कि वह इम्तहान देने देर से पहुंची। बहुत कहने पर भी उसे हाल के अंदर जाना नहीं मिला। उसकी पूरे एक साल की पढ़ाई बर्बाद हो गई। छींक आने से अशुभ नहीं हुआ, बल्कि उससे जुड़े अंधविश्वास को मानने से हुआ। भारती के भैया को भी एक बार इंटरव्यू में देर से पहुंचने के कारण एक अच्छी नौकरी से हाथ धोना पड़ा।

दीदी के ब्याह के समय मुझे जुकाम हुआ था। बहुत छींकें आती थीं। मां की कड़ी हिदायत थी कि शुभ रस्मों के वक्त पास मत फटकना। मैंने उन्हें याद दिलाया कि जब भैया बी.ए. का परीक्षा-फल देखने जा रहे थे, उनको छींक आ गई थी। रोकने पर भी वह रुके नहीं थे और वह प्रथम श्रेणी में पास हुए थे। अम्मा का जवाब था 'सो तो ठीक है। फिर भी छींक आने से मन शंका से भर जाता है।'

अंग्रेज लोग मानते हैं कि यात्रा के समय छींक अगर बाईं नासिका से आएगी तो यात्रा अशुभ होगी और अगर दाईं नासिका से आएगी तो यात्रा शुभ होगी। वे लोग नए वर्ष की पूर्व संध्या में छींक आना अशुभ मानते हैं। हमारे यहां भी यात्रा के पहले और हवन पूजा आदि के पहले छींक आना अशुभ मानते हैं।

अमरीकी अंधविश्वास के हिसाब से भोजन के समय छींक आना मौत को न्यौता देना है। लेकिन हमारे यहां कहते हैं "छींकत खाय छींकत नहाय" यानि इन दोनों के पहले छींक आना अशुभ नहीं है।

छींक आना शुभ है

दुनिया के कुछ देश ऐसे भी हैं जहां छींक का आना शुभ माना जाता है। इनमें से एक है ग्रीस। यहां की सभ्यता भी भारत की तरह बहुत पुरानी है। वहां एक मशहूर विद्वान अरस्तू हुआ है। उसके हिसाब से अगर कोई व्यक्ति मौत की शैया पर पड़ा है और उसे छींक आ जाए तो वह जी जाएगा और स्वस्थ हो जाएगा।

पुराने समय में वहां विश्वास था कि छींक आत्मा द्वारा देवताओं को भेजा गुप्त संदेश है। सन् 480 की बात है कि वहां के एक राजा ने

युद्ध में जाने से पहले देवताओं को खुश करने के लिए पूजा और बलि का आयोजन किया। ठीक बलि से पहले उसे छींक आ गई। पुजारियों ने इसे बड़ा शुभ माना और उस लड़ाई में उस राजा की जीत हुई।

पश्चिमी देशों की कई लोक कथाओं में छींक को अच्छी सेहत की निशानी माना गया है। एक देश में आदतन ज़्यादा छींकने वाले को अच्छी सेहत और लंबी उम्रवाला माना जाता है।

शुभ-अशुभ दोनों

जापानी लोग मानते हैं कि अगर एक छींक आती है तो आपके सौभाग्य के रास्ते खुलने वाले हैं। अगर दो छींकें आती हैं तो आपने कोई अपराध किया है। अगर तीन छींकें आती हैं तो आप जरूर ही बीमार पड़ने वाले हैं। ये तीनों ही कितनी अलग चीजें हैं। इन्हें छींक से जोड़ कर हंसी आती है। है न?

यूरोप के कुछ देशों में यह भी माना जाता है कि अगर आपको कई बार लगातार छींक आए जा रही हैं तो ज़रूर आसपास कहीं चोर छिपे हैं।

इस सबसे साफ़ ज़ाहिर है कि अलग-अलग स्थानों पर घटी कुछ शुभ-अशुभ घटनाओं के छींक से जुड़ जाने के फलस्वरूप अंधविश्वासों ने जन्म लिया होगा। तर्कपूर्ण वैज्ञानिक खोज का जन्म तो बहुत बाद में हुआ होगा। किसी चीज़ के कारण को जानने की ज़्यादा कोशिश करे बिना जब कारण निर्धारित कर दिए जाते हैं तो यह सब अंधविश्वास के रूप में सामने आते हैं। खाली पढ़ा-लिखा होने से ही मनुष्य अंधविश्वास छोड़ दे ऐसा नहीं है।

तर्कपूर्ण वैज्ञानिक सोच से ही इनसे छुटकारा पाया जा सकता है। अगर हम ध्यान दें कि छींक के आने के बाद क्या होता है, ऐसा कई बार करें तो पाएंगे कि कभी अच्छा हुआ तो कभी बुरा। दरअसल अच्छा और बुरा दोनों ही हमारी जिंदगी के हिस्से हैं। छींक से इसका कोई रिश्ता नहीं है।

अंधविश्वासों की परीक्षा करनी ज़रूरी है। यह हमारे मानसिक विकास में मदद करेगा। इससे गलत रूढ़िवादी सोच को बदलने में मदद मिलेगी।

बात रज़ामंदी की

जब वह ब्याही गई, उम्र थी पंद्रह बरस
पांच बच्चों की मां बनी, उम्र थी पच्चीस बरस
इस सबमें उसकी रज़ामंदी थी

पति दूसरी औरत लाया
हर ज़ोर जुल्म उस पर ढाया
उसकी रज़ामंदी थी

उसे सिखाया गया था चुप रहना
हर हाल में समझौता करना

था 'विकल्प' शब्द उसके भाषाकोष के पार
क्या यही होता रहेगा
आधी दुनिया के जीवन का उपसंहार?

सुहास कुमार

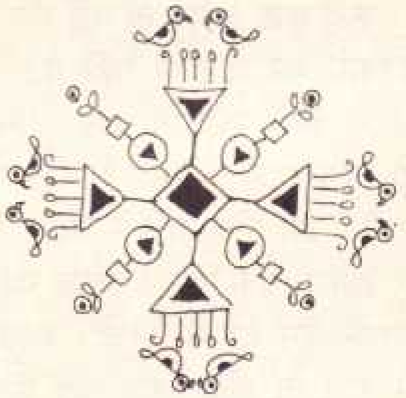

शांति की कहानीः उसी की ज़ुबानी

एक छोटे से गांव के गरीब कुम्हार परिवार में जन्मी थी मैं। बचपन से भगवान में बड़ी भक्ति थी। मां मना भी करती पर मैं न मानती। मेरा मन शादी-ब्याह में भी नहीं था। लेकिन ज़बरदस्ती मेरा ब्याह कर दिया, पंद्रह साल की कच्ची उम्र में।

मेरा मन बहुत दुखी हुआ। पति का संग-साथ अच्छा नहीं लगता था। सबने कहा इस पर भूत-चुड़ैल है। ससुर ने कई बार मेरे साथ ज़बरदस्ती करनी चाही। हर बार मैं किसी तरह बच कर निकल भागी। आधी-आधी रात को पड़ौसियों के दरवाज़े पर मदद के लिए गिड़गिड़ाती रहती। लेकिन लौट कर तो उसी नरक में आना पड़ता था। ससुराल वाले कई दिनों खाना नहीं देते। जानवरों की नाद से पानी पीना पड़ता था। रात पड़ते ही मैं यहां वहां, कभी जानवरों के औसारे में छिपती फिरती।

कहीं कोई सहारा नहीं

शादी हो चुकी थी ना, इसलिए इस जीवन से कोई छुटकारा नहीं था। न ही कहीं से कोई मदद। हमारे समाज में शादी वो दीवार है जिसके पीछे चाहे क़तल कर दो या तिल-तिल कर के जान ले लो, आस-पास वाला कोई चूं भी नहीं करता। अगर कोई पुकारता है तो बस वह औरत।

सात साल बीत गए। एक लड़की भी हो गई। मायके में भाइयों के पास आई। वहां भी रोज़ अपमान होता था मेरा। भाइयों का कर्जा उतारने के लिए मैंने मज़दूरी भी की। पन्द्रह साल गुज़र गए यूं ही मायके और ससुराल के बीच धक्के खाते। फिर भी मैं बेघर ही रही।

लपट उठी विद्रोह की

एक रात ससुराल वालों ने जानवरों के ठान में खंबे से उल्टा बांध कर मुझे खूब पीटा। सारी रात वहीं पड़ी रही। नहीं याद कितनी बार होश में आई और कितनी बार बेहोश हुई।

सुबह थके-टूटे शरीर पर तार-तार हुई साड़ी लपेट कर पहली बार पुलिस थाने गई। पुलिस ने सब ससुराल वालों की खूब धुनाई की। सारा गांव मुझ पर थू-थू करने लगा। पन्द्रह साल से जब मैं मर-मर कर जी रही थी तब किसी ने मुंह न खोला। आज जब पहली बार मैंने जीना चाहा तो सबने बोलना शुरू कर दिया। अब मुझे परवाह नहीं थी।

ससुराल वालों ने घर से निकाल दिया। अगले चार-पांच साल न किसी ने काम दिया न कोई सहारा। टूटी-फूटी झोपड़ी में भिखारियों की सी जिंदगी बिताती रही। पड़ोस की कुछ औरतें छिप कर मदद करती थीं। तभी जिंदा रह सकी। लेकिन दुख सहते-सहते आधी पागल सी हो गई थी मैं। खबर सुन के भाई आए। इलाज कराया लेकिन ठीक होते ही फिर बेघर हो गई। मेहनत कर के किसी तरह अपना और बच्ची का पेट पालती रही।

एक नई सुबह

एक दिन ससुराल के कुछ भतीजों ने दया करके एक बछिया दे दी थी। उसे खिलाने लायक भी नहीं था, सो भाइयों के यहां छोड़ दी थी। वही बछिया अब गाय बन गई थी। बड़ी मुश्किलों से भाइयों ने वह लौटाई। वही अब मेरे जीने का सहारा बन गई। एक स्थायी आमदनी होते ही मेरी हालत सुधरने लगी। तब मुझे पता लगा अपने

पैरों पर खड़े होने का मतलब।

कुछ दिनों बाद ससुराल वालों ने मेरे पति को मार-पीट कर घर से निकाल दिया। शाम पड़े वह मेरे दरवाजे पर आया। मैंने रोटी खिला कर वापिस भेज दिया। अगले दिन वह फिर मेरे दरवाजे पर खड़ा था। चाहती तो मैं फिर उसे निकाल देती। लेकिन मैंने सोचा अब वो मुझे नहीं सता सकता। घर में मर्द होगा तो काम में मदद मिलेगी। सो रख लिया उसे, पर अपनी शर्तों पर।

मैंने बकरियां खरीदीं। अपना धंधा बढ़ाया। घर बनवाया और बच्चे भी जने, लेकिन दोबारा कभी किसी से दबी नहीं।

सिर ऊंचा कर के खड़ी हूं आज

मेरा अपना घर है। काम धंधा है। सरकारी कार्यक्रम में कार्यकर्ता हूं। मुसीबत में पड़ी औरतों की सहेली हूं। अपनी बेटियों के पीछे मज़बूत दीवार हूं। उन्हें वह सब कभी नहीं सहना पड़ेगा जो मैंने सहा।

आज की शांति और भूखे पेट मार-पीट खाती, रोती गिड़गिड़ाती शांति के बीच लोगों को शायद कोई समानता न दिखे लेकिन मुझे सब याद है। इसलिए हर औरत के दुख में मुझे अपना दुख दिखता है। मैं मौत के कगार तक जा-जाकर भी बच गई लेकिन हज़ारों, लाखों शांतियां अपनी कहानी सुनाने के लिए ज़िंदा भी नहीं रह पातीं।

क्या हम सबका फर्ज़ नहीं कि उनकी तरफ़ मदद का, प्यार का और बहनापे का हाथ बढ़ाएं।

□

पैरों पर खड़े होने का मतलब।

कुछ दिनों बाद ससुराल वालों ने मेरे पति को मार-पीट कर घर से निकाल दिया। शाम पड़े वह मेरे दरवाजे पर आया। मैंने रोटी खिला कर वापिस भेज दिया। अगले दिन वह फिर मेरे दरवाजे पर खड़ा था। चाहती तो मैं फिर उसे निकाल देती। लेकिन मैंने सोचा अब वो मुझे नहीं सता सकता। घर में मर्द होगा तो काम में मदद मिलेगी। सो रख लिया उसे; पर अपनी शर्तों पर।

मैंने बकरियां खरीदीं। अपना धंधा बढ़ाया। घर बनवाया और बच्चे भी जने, लेकिन दोबारा कभी किसी से दबी नहीं।

सिर ऊंचा कर के खड़ी हूं आज

मेरा अपना घर है। काम धंधा है। सरकारी कार्यक्रम में कार्यकर्ता हूं। मुसीबत में पड़ी औरतों की सहेली हूं। अपनी बेटियों के पीछे मज़बूत दीवार हूं। उन्हें वह सब कभी नहीं सहना पड़ेगा जो मैंने सहा।

आज की शांति और भूखे पेट मार-पीट खाती, रोती गिड़गिड़ाती शांति के बीच लोगों को शायद कोई समानता न दिखे लेकिन मुझे सब याद है। इसलिए हर औरत के दुख में मुझे अपना दुख दिखता है। मैं मौत के कगार तक जा-जाकर भी बच गई लेकिन हज़ारों, लाखों शांतियां अपनी कहानी सुनाने के लिए ज़िंदा भी नहीं रह पातीं।

क्या हम सबका फर्ज़ नहीं कि उनकी तरफ़ मदद का, प्यार का और बहनापे का हाथ बढ़ाएं।

□

सबला के लेखों पर चर्चा

अनिता ठैनुआं

अप्रैल-मई 1992 के अंक के लेख "कनीज़ा की मौत" पर पक्का बाग़ और नौह गावों में चर्चा की।

अगर आपकी बेटी के साथ ऐसा हुआ हो तो आप क्या करतीं? एक का कहना था यह भगवान की मर्ज़ी थी। दूसरी ने कहा कि हमें हाथ पर हाथ रख कर नहीं बैठना चाहिए। अपनी लड़की को भूखे भेड़िए को देने के पहले इस लायक बनाना चाहिए कि ऐसे लोगों से लड़ने की शक्ति मिल सके। अब तो सरकार ने महिलाओं के लिए कानून बना दिए हैं। अगर कोई औरत अपने ससुराल वालों से लड़ना चाहे तो बिना पैसा खर्चे लड़ सकती है।

अगर कनीजा आपकी पड़ोसिन होती तो आप क्या करतीं?

गांव की कई महिलाओं का कहना था कि अगर पड़ोस में कोई औरत पिट भी रही हो तो कोई बचाने नहीं जाता। मर्द कहता है मेरी औरत है, मैं जो चाहूं करूं। इसी तरह कोई अपनी बहू को मार भी देता है तो कोई कुछ नहीं बोलता। उल्टे पूरे गांव वाले मिलकर मामले को दबा देते हैं। अगर गांव में दो पार्टियां हैं तो भले ही एक दूसरे की शिकायत करें। गांव में महिलाओं को न तो समझ है, न एकता, न हिम्मत।

गांव में जन सहयोग की भारी कमी है। औरतों को खुद हिम्मत जगानी होगी। एक महिला ने बताया कि नौह की एक धीमर जाति की लड़की रामश्री के साथ भी ऐसा ही हुआ था। घरवालों को पता चल गया। वह अपनी लड़की को बेहोशी

की हालत में ले आए थे। अब वह ससुराल नहीं जाती। उसने सेंटर पर पढ़ना-लिखना सीखा, सिलाई सीखी, उसी से अपना पेट भरती है।

संगठन ज़रूरी

गांव जटौली में "महिलाओं में चेतना जाग उठी" लेख पर चर्चा हुई। महिलाओं का कहना था इसमें चेतना की कोई बात नहीं है। इसमें हिम्मत होनी चाहिए। कभी-कभी दस औरतों के साथ अपराध हो जाते हैं, कभी एक औरत के साथ कुछ नहीं हो पाता। पुलिस का रवैया सब जगह एक सा है। वह पैसे वाले की ओर हो जाती है। जहां इस तरह की मज़बूत संस्थाएं काम कर रही हैं वहां सब कार्य सफल हो जाता है। सफल न भी हों तो भी औरतों को हक़ के लिए लड़ने का मौका तो मिल जाता है।

गांव बरसों का नगला व गोलपुरा में लेख "कानून मेरे साथ है" पर चर्चा की गई।

क्या हर औरत वह कदम उठा सकती है जो अनपढ़ नाथी ने उठाया?

एक महिला ने कहा "इतनी जल्दी कदम तो आदमी भी नहीं उठा सकते।" गरीबों की मज़बूरियां होती हैं। उन्हें लगता है कि अगर बोली तो इन पैसों से भी जाऊंगी।

नाथी ने अपाहिज पति और बच्चों के होते हुए यह कदम उठाया यह हम सबके लिए एक बहुत बड़ा सबक है। गांव की सभी महिलाओं ने कहा कि वैसी हिम्मतवाली महिला बनना ज़रूरी है मगर हम ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि हमें इसकी पूरी जानकारी ही नहीं है। संगठन में शक्ति होती है।

पति परमेश्वर जो रक्षा करे

गांव किशनपुरा में "टकरावों के बीच निखरी जिंदगानी" पर चर्चा की गई।

लेख सुनने के बाद महिलाएं बोली बहन जी जब पैसा नहीं होता है तो शादी ऐसे ही लड़कों से कर देते हैं।

कैसे लड़के से शादी होनी चाहिए?

पहले वह शरमाई, फिर बोली—"मेल का होना चाहिए।"

रुकमिनी बाई ने पति को पीटा। क्या वह ठीक था? पति तो परमेश्वर होता है?

सभी महिलाओं ने कहा कि पति तो परमेश्वर है लेकिन अगर वह परमेश्वर ठीक ढंग से न पेश आए तो उसके साथ ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए। परमेश्वर वह है जो हर तरह से रक्षा करे। एक ने कहा—"बहन जी, काऊ ज़माने में पति ए परमेश्वर मानते होगें। अब कोई न मानें।" रुकमिनी ने जो किया बहुत अच्छा किया। मगर हमारे संस्कार ऐसे हैं कि बहुत कम औरतें अपने पति पर हाथ उठाती हैं। बाकी सब सहन ज़्यादा करती हैं।

गांवों में शुरू से पति परमेश्वर के अधीन रहने की शिक्षा लड़की को दी जाती रही है। इसी से ससुराल में भी उससे यही आशा की जाती है। अगर औरतें आवाज़ उठाएं कि कम उम्र में लड़कियों की शादी नहीं करेंगे तो शायद कुछ हो सके।

घरवालों के बंधन

गांव पीरनगर में "आशा की एक किरण" पर चर्चा की गई।

"जिस तरह शारदा ने पढ़ना शुरू किया। अगर मौका मिले तो क्या तुम ऐसा करोगी?"

लड़कियां—"हम करना भी चाहें तो घरवाले करने नहीं देंगे। गांव में पढ़ने की उम्र सिर्फ 10 बरस तक होती है। कहते हैं घर का काम करेगी। शादी के बाद दूसरी पढ़ाई पढ़ेगी। अब सयानी हो गई है।"

प्रेरकों ने लिखा है

आनंद का विषय है कि यह पत्रिका नव-साक्षर, अनपढ़ एवं बच्चों के लिए बहुत लाभदायक है। मैं 'सबला' पत्रिका सभी वर्ग के लोगों को पढ़ाता हूं और पत्रिका का आभारी हूं।

लक्ष्मण झा
ज.शि.नि., सादीपुर, रानेश्वर

'सबला' सबकी ज्योति-दीप पत्रिका है। इसे पढ़कर हर मानव का रुख बदल जाता है। अंधविश्वास, कुरीतियों आदि से लड़ने की ज्योति जल जाती है।

शिक्षा से अन्याय मिटाने के लिए 'सबला' पत्रिका मिल जाती है।

बसंत लाल शर्मा
ज.शि.नि., मजवरा, चित्तौड़गढ़ (राज.)

'सबला' हर अबला को आगे बढ़ाने अर्थात समाज में उसे उसके अधिकार दिलाने, सबके साथ चलने का एकमात्र कालजयी हथियार है। इसे जो नारी मन लगाकर पढ़ेगी वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होगी।

असीम कुमार मंडल
ज.शि.नि., सरसानोल, दुमका (बिहार)

'सबला' है अबला बहनों की पोथी
यह बहनों को सच्ची राह दिखाती
यह बहनों का आत्मबल जगाती
जब तक है अनपढ़ता का अंधकार
तब तक सहती रहोगी अत्याचार
नई रोशनी लाती 'सबला' बहनों की पोथी

रामबाबू वर्मा
ज.शि.नि.—कनेरा, चित्तौड़गढ़ (राज.)

'कर्मिणी' के प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम की नवसाक्षर बहनों जयश्री, राजेंद्र कौर, दर्शना, उषा, पुष्पा देवी, सुमन, विमला, ममता और शकुंतला ने 'सबला' के बारे में हमें लिखा है—

'सबला' को पढ़कर लगता है कि हमें दुनिया की खबर मिल रही हो। औरतों पर इतने ज़ुल्म, अत्याचार होते हैं उनकी बात खुलकर पत्रिका के ज़रिए आती है। हमारी हिम्मत भी इससे बढ़ती है। अपने हक़ के लिए लड़ना कोई जुर्म नहीं है। संघर्ष का रास्ता आसान नहीं होता, लेकिन असंभव भी नहीं है।

हमें कई बातें पत्रिका से सीखने को मिलीं। जैसे 18 साल से कम की लड़की की शादी नहीं करनी चाहिए। लड़के-लड़की में भेदभाव नहीं करना चाहिए। लड़कियों के हुनर को आगे बढ़ाना चाहिए। उन्हें प्रशिक्षण दिलवाना चाहिए। शिक्षा के पूरे मौके देने चाहिए। जुर्म को चुपचाप नहीं सहना चाहिए। अगर आस-पास जुर्म हो रहा है तो उसकी भी रपट लिखानी चाहिए।

ज़रूरी है कि आदमी औरत एक-दूसरे को समझें। गृहस्थी की गाड़ी तभी ठीक से चल सकती है जब दोनों पहिए बराबर हों। उनमें संतुलन हो। पत्रिका पढ़कर अच्छा भी लगता है। दुख भी होता है। हमारे समाज में औरत की क्या दशा है? न सिर्फ उसके साथ बेइंसाफी होती है, उसे अत्याचार सहने का आदी भी बना दिया जाता है।

हम 'सबला' पत्रिका की बेहद शुक्रगुज़ार हैं। 'सबला' के बारे में कुछ कहना तो सूरज को दीया दिखाने वाली बात होगी। यह हमारी सोई हुई बहनों को ज़रूर जगाएगी। 'सबला' छापने वाली सभी बहिनों को बहुत-बहुत धन्यवाद। □

हमारे पाठक लिखते हैं...

गांव स्तर पर 'सबला' की बहुत मांग रहती है। 'सबला' के प्रत्येक अंक का हमें इंतजार रहता है। इसमें उपयोग की गई सामग्री हमें हर तरह से सहयोग प्रदान करती है।

इन्द्रा व्यास, मनीषा भट्ट
महिला विकास कार्यक्रम, बांसवाड़ा (राज.)

'सबला' की एक प्रति मैंने पढ़ी जिसने मुझे काफ़ी प्रभावित किया। मैं 'सबला' के माध्यम से विधि मंत्रालय का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहती हूं कि हिन्दू कानून में बेटी के पिता की संपत्ति में हिस्से के अधिकार को दहेज के लोभी ससुराल वालों ने अपनी मांग को पूरी करने का एक हथकंडा बना लिया है। अतः इस क्षेत्र में विशेष शर्तों या परिस्थितियों में ही यह हक़ दिया जाना चाहिए।

बबिता चौधरी,
पूर्णिया, बिहार

वास्तव में 'सबला' महिलाओं के संघर्षमय जीवन के लिए काफ़ी उपयोगी साबित हो रही है। आप हमें सदैव मार्ग-दर्शन देते रहेंगे, आप से यही अपेक्षा है।

मजहर अली
देवरिया (उ.प्र.)

ग्राम में जनशिक्षण नीलियम केंद्र पर 'सबला' पत्रिका देखने को मिली। प्रेरक महोदय से कहकर घर जाकर तसल्ली से पढ़ी। फिर दिमाग में तरह तरह के उतार-चढ़ावों ने सोचने पर मजबूर किया। फिर साहस कर पड़ोसिन महिलाओं को बताया। हम 8-10 महिलाओं ने ग्राम के कोने-कोने में पत्रिका का सार पहुंचाया है।

चंद्रावती सोलंकी,
गांव खबरा, बुलंदशहर (उ.प्र.)

'सबला' से बल मिलता नारी को
'सबला' है साथी नारी की
'सबला' बतलाती नारी गाथा
'सबला' हर नारी को भाती
'सबला' देती नारी को ज्ञान
'सबला' है नारी की शान

विनोद दूबे
अध्यापक, मांडुप, बंबई

आज हमारे शहरों में रहने वाली समृद्ध व मध्यम वर्ग की बहुत सी स्त्रियों का शोषण होता है चाहे वह मानसिक हो या शारीरिक। 'सबला' ने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया है। जब तक उनके शोषण की ओर नहीं देखेंगे तब तक क्या 'सबला' का उद्देश्य पूरा होगा?

मनुप्रकाश
जालंधर (पंजाब)

तन में है शक्ति और साहस
मन में करुणा और अभिलाषा
आज नहीं तो कल जानेगा
यह जग नारी की परिभाषा
नारी वह जलती बाती जो
रोशन कर दे सौ सौ दीपक
घनी अमावस की रातों में
कंचन की किरणें भर दे
घनी निराशा की बेला में
आशा है केवल नारी ही।

अरुण 'उपेक्षित'

सदियों से स्त्री के मन में अपनी अस्मिता खोने, शील भंग होने का डर बिठा दिया गया है। दुर्घटना किसी के भी साथ हो सकती है। बलात्कार, अश्लील व्यवहार व छेड़छाड़ के मामलों में हमारा समाज और स्वयं स्त्री भी अपने को दोषी मान बैठती है। बलात्कारी मानसिकता के पीछे ताक़त प्रदर्शन की भावना रहती है। इसके लिए एकमात्र विकल्प है ताक़तवर बनना। खासकर रुहानी और मानसिक स्तर पर। आत्मविश्वास की चमक वाले गरिमापूर्ण व्यक्तित्व के बजाए डरी, सहमी, सकुचाई स्त्री का शोषण ज़्यादा होता है।

'सबला' के मार्च अंक में हमारी बेड़ियां व औरतों के खिलाफ पारिवारिक हिंसा प्रेरणादायक लगीं। 'सबला' की जितनी भी तारीफ की जाए कम ही होगी।

श्रीमती दयावंती देवी
माकड़वाली (राज.)

'सबला' के माध्यम से जो क्रांति लाई जा रही है उससे नया इतिहास बनेगा। हमारे काम में 'सबला' से काफ़ी मदद मिलती है।

रेनुका पामेचा
रूवा, जयपुर

आपके द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'सबला' के प्रत्येक अंक अपने आप में उत्कृष्ट और रोचक है। इसके लिए संपादक मंडल को बधाई। यह पत्रिका निःसंदेह नारी जागृति/विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है जो प्रशंसनीय है। यह पत्रिका नारी समाज की एक कुंजी है, जिसमें वह अपनी सब समस्यायों का समाधान ढूंढ सकती है।

उज्जवल कुमार सरकार
जिला साधना केंद्र, किशनगंज

जागोरी के नारीवादी गीतों की किताब का नया संस्करण छप कर तैयार है। इसमें पुराने गीतों के साथ कितने ही नए गीत जोड़े गए हैं। नया मुखपृष्ठ है और नई सजधज। दाम वही पुराने, बारह रुपए।

पाने का पता

जागोरी,
बी-5 हाउसिंग कोआपरेटिव सोसाइटी
साउथ एक्सटैंशन, पार्ट-I
कोटला रोड
नई दिल्ली-110049

'सबला' नारी उत्थान के लिए एक सही कदम है। 'सबला' में प्रकाशित "महिला सुरक्षा कानून", "महिलाओं में चेतना जाग उठी है" तथा "औरत की स्वास्थ्य समस्याएं" अति प्रंशसनीय हैं।

अध्यक्ष, युवा क्लब
फाजलपुर (उ.प्र.)

वास्तव में 'सबला' उन तथ्यों को सामने कर देती है जिस अंधकार में गांव की महिलाएं डूबी हुई हैं। इसी तरह 'सबला' पत्रिका गांव-गांव पहुंचती रहे तो एक दिन महिलाओं को समाज में अधिकार दिलाने में 'सबला' की अहम् भूमिका होगी। सहयोग के लिए धन्यवाद।

सुदर्शन यादव
सलेमपुर, देवरिया

जूझ रही औरतें

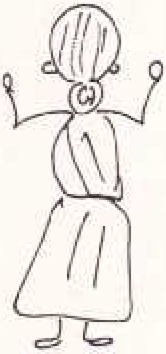

औरतें
उठकर खड़ी हो गई हैं
चूल्हा-चौका
घर-दुआर
बाहर-भीतर
आंगन-कोठार
सब कुछ संभालते हुए भी
उठ खड़ी हुई हैं
औरतें

गोद में उठाए हुए
दुधमुंहे बच्चों को
देख रही हैं सपना
बेहतर दिनों का।

औरतें
स्लेट पर
जगमगाते अक्षरों को उकेरकर
महसूस करती हैं
जैसे
लिख रही हों
अपने ही हाथों
अपना बेहतर भविष्य

दलों के साथ
हंसते-गाते
खेत में खटती
बोझा ढोतीं
जुझारू औरतें
अब
जूझ रही हैं

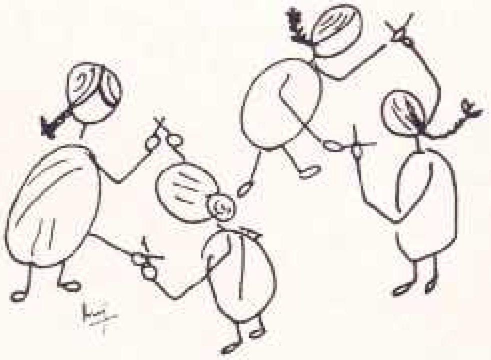

अपने भीतर के
गहन अंधकार से
ताकि
वे भी समझ सकें
सदियों से चली आई
दबिश के
नाजायज कारणों को।

परदेशीराम वर्मा

चली थी अकेली मंज़िल की तरफ़
लोग मिलते गए कारवाँ बनता गया